शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 10 अंक : 11 1 जून, 2018

(द्वितीय ज्येष्ठ, विक्रम संवत् 2075)

संस्थापक
स्व. मुकुन्दराव कुलकर्णी

❖

परामर्श
के.नरहरि
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक
सन्तोष पाण्डेय

❖

सह सम्पादक
विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी ❑ भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक
डॉ. शिवशरण कौशिक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी
बसन्त जिन्दल ❑ नौरंग सहाय भारतीय
कार्यालय प्रभारी
आलोक चतुर्वेदी : 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/- वार्षिक शुल्क 200/-
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा चित्रों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया गया है।

पर्यावरण धर्म और भारत ❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

अध्यात्म आधारित, 'तेन त्यक्तेन भुञ्जिथा' जैसी भारतीय उक्तियाँ पूर्णतः वैज्ञानिक हैं। ये उक्तियाँ कानूनों से अधिक प्रभावी रही हैं। बच्चों को केवल किताबी ज्ञान नहीं अपितु संस्कार देकर पर्यावरण को संरक्षित किया जा सकता है। धर्म केन्द्रित भारतीय संस्कृति को 'धर्म निरपेक्षता' नामक गैरवैज्ञानिक सोच के कारण बहुत हानि हो चुकी है। अब समय आ गया है, जब ईशोपनिषद् व गीता जैसे, पंथ-निरपेक्ष व मानव हितकारी ग्रन्थों से बच्चों को परिचित कराया जावे और यह स्वीकार किया जावे कि पर्यावरण प्रदूषण के राक्षस को आध्यात्मिकता से ही मारा जा सकता है। भारत में धर्म व वैज्ञानिक दृष्टिकोण एक दूसरे के पर्याय हैं। अवैज्ञानिक भौतिकवादी सोच ने, मानवता को ऐसे संकट में डाल दिया है, जिसका हल उसके पास नहीं है।

8

अनुक्रम

4.	पर्यावरण संरक्षण और शिक्षा	- सन्तोष पाण्डेय
6.	पौधारोपण व हमारा पारिस्थिकी तंत्र	- डॉ. भगवती प्रकाश शर्मा
10.	प्लास्टिक प्रदूषण और भारतीय जीवन दृष्टि	- डॉ. बुद्धमति यादव
12.	प्लास्टिक मुक्त परिसर : शिक्षण संस्थाओं का दायित्व	- प्रो. मधुर मोहन रंगा
15.	पर्यावरण संरक्षण की भारतीय दृष्टि	- डॉ. ओमप्रकाश पारीक
18.	शौचालय व स्वच्छता का अर्थशास्त्र	- परमेश्वरन अय्यर
23.	प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में नया चिंतन	- डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल
25.	समग्र शिक्षा नीति की ओर बढ़ते कदम	- डॉ. रेखा भट्ट
28.	विश्वविद्यालय या डिग्री बाँटने वाले कारखाने	- प्रो. गिरीश्वर मिश्र
30.	शिक्षा से समरसता	- रमेश नैयर
32.	रामचरित मानस की प्रांसगिकता	- प्रियंका कुमारी गर्ग
34.	साधु (कुटुम्ब प्रबोधन-तृतीय अध्याय)	- हनुमान सिंह राठौड़
37.	शैक्षिक समाचार	
38.	गतिविधि	

Education and Environment

❑ Dr. TS Girishkumar

One must protect and preserve environment for sustenance and existence. But, many societies all over the globe, who were not under the influence of Semitic theology in their originality, had their own ways of looking at the environment and respecting the environment. With the great sea voyages of Europeans in seventeenth century, most of such societies got into Semitic traditions, either through Christianity or Islam. Bharat ever had well spelt out theories and practices towards protection and maintenance of environment.

20

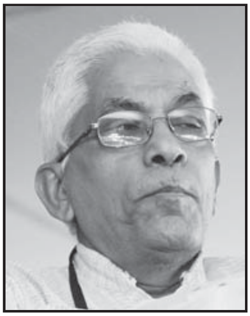

इस वर्ष के विश्व पर्यावरण दिवस के आतिथेय का सुअवसर भारत को मिला है। इस संदर्भ में यह आवश्यक हो जाता है कि पर्यावरण क्षरण व प्रदूषण की भीषण समस्या से समस्त देश को जागरूक कराया जाय व भारत में प्राचीन काल से चली आ रही प्रकृति के साथ समन्वय व पर्यावरण संरक्षण की उत्कृष्ट परंपराओं को कैसे पुनर्जीवित कर पर्यावरण संरक्षण व पर्यावरण की गुणवत्ता को बढ़ाया जाय के प्रयास किये जायें। शिक्षा इसका प्रमुख माध्यम बन सकती है। शिक्षा व्यवस्था व शिक्षण संस्थान पर्यावरण चेतना, संरक्षण व पर्यावरण की गुणवत्ता को बढ़ाने में बहुमूल्य योग दे सकते हैं।

पर्यावरण संरक्षण और शिक्षा

❑ सन्तोष पाण्डेय

संपादकीय

इस समय अधिकांश भारत भीषण गर्मी की विभीषिका से जूझ रहा है। उत्तर भारत का मैदानी भाग तो भट्टी की तरह तप रहा है। तापमान, सामान्य तापमान से काफी ऊपर बना हुआ है। तापमान में निरन्तर बढ़ते व सर्दियों की अवधि के निरन्तर कम होने की प्रवृति ने सम्पूर्ण देश को पर्यावरण में हो रहे परिवर्तनों पर गंभीरता से विचार करने को विवश किया है। विश्व भर के पर्यावरण में हो रहे क्षरण व विभिन्न रूपों में बढ़ रहे प्रदूषण को सर्वाधिक चिन्तनीय माना है। 'ओजोन की परत में छेद' व पृथ्वी पर बढ़ते तापमान से ग्लेशियरों के पिघलने व समुद्री सतह में अनेक मीटर तक की वृद्धि से उत्पन्न खतरे मानव के समक्ष गंभीर चुनौती है। विषय की गंभीरता को सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिन्स की इस टिप्पणी से समझा जा सकता कि निकट भविष्य में ही पृथ्वी मानव के रहने योग्य नहीं रहेगी एवं मनुष्य को अन्य ग्रहों पर आवास को संभव बनाना होगा। ऐसा भी नहीं है कि संपूर्ण विश्व इसके प्रति सजग नहीं है। अनेक दशकों से पर्यावरण में परिवर्तनों को समझने तथा पर्यावरण संरक्षण के लिये गंभीर कदम उठाये जा रहे हैं। इस हेतु अनेक वैश्विक सम्मेलन सम्पन्न हो चुके हैं। कार्बन उत्सर्जन को रोकने के लिये अनेक उपाय किये जा रहे हैं। क्योटो प्रोटोकॉल और फ्राँस में संपन्न समझौता इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम है। अमरीका जैसे जागरूक देश का इस समझौते से हटना चिन्तनीय अवश्य है, परन्तु विश्वास है कि मनुष्य चुनौती का सामना सफलतापूर्वक कर सकेगा। पर्यावरण में हो रहे क्षरण के प्रति विश्व को जागरूक करने हेतु प्रत्येक वर्ष '22 अप्रैल' को विश्व पृथ्वी दिवस' एवं पर्यावरण प्रदूषण को रोकने हेतु 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है। इस वर्ष विश्व पर्यावरण दिवस को 'प्लास्टिक-प्रदूषण को पछाड़ो' के ध्येय वाक्य के साथ मनाया जा रहा है। पर्यावरण संरक्षण की भारत में अनादि काल से परंपरा रही है। इसे दृष्टिगत कर इस वर्ष के विश्व पर्यावरण दिवस के आतिथेय का सुअवसर भारत को मिला है। इस संदर्भ में यह आवश्यक हो जाता है कि पर्यावरण क्षरण व प्रदूषण की भीषण समस्या से समस्त देश को जागरूक कराया जाय व भारत में प्राचीन काल से चली आ रही प्रकृति के साथ समन्वय व पर्यावरण संरक्षण की उत्कृष्ट परंपराओं को कैसे पुनर्जीवित कर पर्यावरण संरक्षण व पर्यावरण की गुणवत्ता को बढ़ाया जाय के प्रयास किये जायें। शिक्षा इसका प्रमुख माध्यम बन सकती है। शिक्षा व्यवस्था व शिक्षण संस्थान पर्यावरण चेतना, संरक्षण व पर्यावरण की गुणवत्ता को बढ़ाने में बहुमूल्य योग दे सकते हैं।

सभी कालखण्डों में पर्यावरण व धर्म का अतिनिकट संबंध रहा है। प्रकृति व पर्यावरण के प्रति समाज में प्रचलित धर्म में स्वीकार किये गये

दृष्टिकोण ने भारी प्रभाव डाला है। पश्चिम में प्रचलित ईसाई धर्म में प्रकृति को मनुष्य के लिये निर्मित किये जाने का विचार रखा गया। फलत: मनुष्य को प्रकृति का नियंता मान कर व्यवहार किया गया। प्रकृति व पर्यावरण पर पूर्ण नियंत्रण के प्रयासों ने मानव को भौतिक सुख व संतुष्टि में तो वृद्धि की परन्तु इन प्रयासों से प्रकृति को हुई हानि की कोई भरपायी की व्यवस्था नहीं की गई। औद्योगिक क्रांति ने इस प्रक्रिया को बल प्रदान किया। परिणाम बहुत शीघ्र ही प्रकट होने लगे व पर्यावरण में हुये क्षरण के प्रति जागरूकता बढ़ने लगी। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से यह चिन्ता गहन हुई व पर्यावरण संरक्षण के प्रयास प्रारंभ हुये। भारत में अति प्राचीन काल से ही प्रकृति पर्यावरण व धर्म में निकट संबंध स्थापित करते हुये इसे धर्म का अंग बनाया। वेद, उपनिषद, पुराण व अन्य सभी धर्मग्रन्थ ब्रह्माण्ड को ईश्वर की कृति मानते हैं, व इन्हें ईश्वर के समरूप मानते हुये दैनिक आचरण में प्रकृति के साथ सहयोग व समन्वय पर बल देते हैं। प्रकृति से उतना ही लेने पर जोर देते हैं जितना कि प्रकृति को वापस दे सकें। यह पर्यावरण संरक्षण का सर्वोत्तम प्रयास है। भारतीय समाज में सदियों से मानव आवास (Human Habitat), वृत्ति, रोजगार, उद्योग, व्यापार, रीति-रिवाज व त्योहार प्रकृति के अनुकूल ही अपनाये गये। वन-वनस्पति, जल, पर्वत इत्यादि को ईश्वर के रूप में मानते हुये ही जीवनदायिनी दैनन्दिनी अपनायी गई। समस्त शिक्षा व्यवस्था एवं स्वयं शिक्षा प्रकृति भौतिक व आध्यात्मिक पर्यावरण की वाहक थी। प्राचीन गुरुकुल आधारित शिक्षा व्यवस्था प्रकृति के सानिध्य में ही संचालित की जाती थी। भारत के इतिहास का एक बड़ा कालखण्ड ऐसा है, जिसके बारे में अधिक आधिकारिक ज्ञान जानकारी उपलब्ध नहीं है। भारतीय सभ्यता व संस्कृति के चरम् पर पहुँचने से अनेक विदेशी आक्रांताओं ने भारत को लम्बी दासता के दौर में धकेला। भारतीय ज्ञान परंपरा का ह्रास हुआ। शिक्षा व शिक्षा व्यवस्था अनेक झंझावातों के कारण अवनति को प्राप्त हुई। अंग्रेजों की मैकालयी शिक्षा व्यवस्था ने संपूर्ण परिदृश्य को बदल दिया। पश्चिमी दृष्टिकोण का प्रसार हुआ। विशाल जनसंख्या निर्धनता, बेरोजगारी, राज्य संरक्षण के अभाव के कारण अज्ञानी भाग्यवादी अंधविश्वासी व असहाय स्थिति में जकड़ गयी। दूषित जाति व वर्ण व्यवस्था ने छूआछूत व सामाजिक विषमता को पुष्ट किया। इन सभी परिवर्तनों का प्रभाव रहा कि भारतीय समाज का बड़ा भाग न केवल शिक्षा से वंचित हुआ वरन् प्रकृति व पर्यावरण से भी दूर हो गया। ईंधन व ऊर्जा की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रकृति के दोहन को बढ़ावा मिला।

स्वच्छता विस्मृत कर दी गयी। गंदगी, खुले में शौच, वनों के ह्रास आदि आम बात हो गयी। व्यक्तिगत स्वच्छता तो बड़ी सीमा तक बची रही परन्तु सार्वजनिक स्वच्छता विस्मृत कर दी गयी। इन सभी का समिष्टकारी प्रभाव प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन व पर्यावरण क्षरण के रूप में प्रकट हुआ। स्थिति यहाँ तक बिगड़ी है कि आज 21वीं सदी के दूसरे दशक में भारत स्वच्छता अभियान को बड़े पैमाने पर मिशन के रूप में अपनाने को विवश हुआ है। इस पर्यावरणीय ह्रास से भारत को अपूरणीय क्षति हुई है। कमजोर स्वास्थ्य व चिकित्सा सुविधा से होने वाली विशाल हानि पर्यावरण संरक्षण से रोकी जा सकती है। इसके लिये शिक्षा को सशक्त माध्यम बनाना होगा।

आज प्लास्टिक का युग है। दैनिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्लास्टिक का प्रयोग हो रहा है। प्लास्टिक प्रकृति जन्य पदार्थ नहीं है? यह बायोडिग्रेविल भी नहीं है। इसकी आयु हजारों वर्ष की है। यह पर्यावरण को सर्वाधिक हानि पहुँचाने वाला पदार्थ है। विश्व में प्रति वर्ष लाखों टन प्लास्टिक कचरा (Waste) उत्पन्न होता है। यूरोपीय देश अपने पर्यावरण संरक्षण हेतु इसे विदेशों को निर्यात करते हैं। चीन के बाद भारत दूसरा ऐसा देश है जो सर्वाधिक प्लास्टिक कचरा आयात कर इसे ऊर्जा के साधन, पुनचक्रण एवं गड्ढ़ों को भरने के काम में ले रहा है। इससे पर्यावरण का भारी क्षति पहुँच रही है। समुद्रों में भी प्लास्टिक कचरा बढ़ने से समुद्री जीवन को क्षति पहुँच रही हे। भारत की नदियाँ व जल स्रोत इस व्याधि से मुक्त नहीं हैं। इस भयावह स्थिति को दृष्टिगत कर विश्व भर में प्लास्टिक के कम से कम उपयोग पर जोर दिया जा रहा है। यही कारण है कि इस वर्ष विश्व पर्यावरण दिवस को प्लास्टिक से मुक्ति के रूप में मनाया जा रहा है। भारत में प्लास्टिक से मुक्ति के प्रयास अति आवश्यक हैं व अपनाये गये उपायों को कठोरता से लागू करना आवश्यक है।

भारत में पर्यावरण संरक्षण में शिक्षा- शिक्षा निर्माण व्यवस्था तथा शिक्षण संस्थानों को पर्यावरण संस्कार केन्द्र के रूप में विकसित करना अति आवश्यक है। प्रतिवर्ष देश की जनसंख्या का बड़ा भाग जीवन के अनेक बहुमूल्य वर्ष शिक्षा में गुजारता है। यदि इस शिक्षण काल में उन्हें पर्यावरण के महत्त्व से परिचित कराकर पर्यावरण संरक्षण में दक्ष बनाये जाने से जीवनपर्यन्त इसका पालन सुनिश्चित किया जा सकता है। इसके लिये आवश्यक है कि शिक्षा में प्रकृति व पर्यावरण को व्यापक सामाजिक व नैतिक दायित्व के रूप में सम्मिलित किया जाए। पर्यावरण संरक्षण, शुद्धि, स्वच्छता को धर्म का रूप मानते हुये संस्कारों के रूप में व्यक्तित्व का भाग बनाया जाय। समस्त पाठ्यक्रम, पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ इसे अभीष्ट माने। शैक्षिक संस्थान परिसर स्वयं पर्यावरण आदर्श के रूप में विकसित हो, ऐसा लक्ष्य होना चाहिये कि भारत अपने अध्यात्म के कारण विश्व गुरु माना जाता है। शिक्षा व शैक्षिक संस्थानों भारतीय जीवन के शाश्वत जीवन मूल्यों व नैतिक मूल्यों के केन्द्र होने चाहिये। ऐसा होने पर ही न केवल भौतिक पर्यावरण संरक्षित होगा वरन् आध्यात्मिक पर्यावरण भी प्रकृति व भारतीय परंपराओं के अनुरूप होगा। ❑

पौधारोपण व हमारा पारिस्थिकी तंत्र

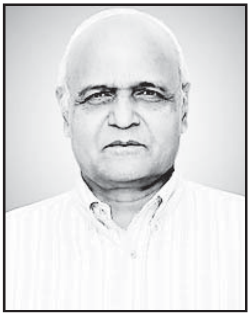

घटती जैव विविधता के कारण फसलों के अनेक मित्र कीटों के विलोपन से आज जहाँ पर-परागण में आयी कमी से फसलों की उत्पादकता में ह्रास हो रहा है, वहीं अनेक पेरासाइटॉइड कहे जाने वाले उन परजीवी कीटों, जिनका जीवन चक्र फसलों को नष्ट करने वाले कीटों व कृमियों पर पूरा होता है, के विलोपन से भी हमारी निर्भरता उत्तरोत्तर, अत्यन्त घातक कीटनाशी रसायनों पर बढ़ती जा रही है। इन कीटनाशी रसायनों से आज चर्म रोग, यकृत विकार व गुर्दों में विकृति, पार्किनसॉनिज्म व कैंसर जैसी अनगिनत असाध्य बीमारियाँ, महामारी की सी तेजी से बढ़ रहीं हैं। बिना पेस्टीसाइड फसलों को कई घातक कीटों से बचाने में सक्षम उपरोक्त पेरासाइटॉइड श्रेणी के कीटों के कई दर्जनों संकुल हैं, जिनका जीवन-चक्र विविध फसलों पर लगने वाले कीटों पर ही पूरा होता है।

❑ डॉ. भगवती प्रकाश शर्मा

देश में सभी शिक्षण संस्थाएँ प्रतिवर्ष व्यापक स्तर पर पौधारोपण करती हैं। लेकिन, पर्यावरण व पारिस्थितिकी का समुचित बोध नहीं होने से अक्सर नीम, अमलतास, अशोक, शीशम, गुलमोहर व कचनार जैसे किसी एक अथवा दो-तीन प्रजाति के पौधे ही लगा देती हैं। इस प्रकार पौधारोपण में पारिस्थितिकी तंत्र की अवहेलना सीमित या एक ही प्रजाति का पौधरोपण करने से होती है तथा हरीतिमा में वृद्धि के उपरांत भी पर्यावरण की बहुत बड़ी क्षति होती है। पारिस्थितिकी के संरक्षण हेतु यह परमावश्यक है कि पौधारोपण में अधिकतम विविधता लाकर कीट-पतंगों व सूक्ष्म जीवियों से लेकर कृषि मित्र कहे जाने वाले कीटों व सूक्ष्मजीवियों को वर्ष भर आवास व आहार उपलब्ध हो सके।

यह उल्लेखनीय है कि हमारी मिट्टी में सूक्ष्म जीवाणुओं की प्रचुरता ही उसकी उर्वरता को बनाये रखने व बढ़ाने में सहायता करती है। पृथ्वी पर पाये जाने वाले तीन लाख प्रकार के आवृत्तबीजी (एंजिओस्पर्म) अर्थात पुष्पित होने वाले या फूलों वाले पेड़-पौधे और डेढ़ लाख प्रकार के कीट-पतंग परस्पर अवलम्बित हैं। इनमें जो कीट-पतंग फसलों व फलदार उद्यानों के परागण में सहायक सिद्ध होते हैं, उनका आज हमारी कुल कृषि उपज में 15-20 प्रतिशत योगदान है। पृथ्वी पर विद्यमान पेड़-पौधों व सूक्ष्मजीवियों से लेकर कीट-पतंगों व मनुष्य पर्यन्त सभी जीवधारी एक बड़ी सीमा तक परस्पर अवलम्बित हैं। इसलिये सृष्टि में विद्यमान समस्त जीव प्रजातियों के अस्तित्व का संरक्षण करना अति आवश्यक है। यथा आज पेड़-पौधों में परागणकर्ता कीट-पतंगों, तितलियों व मधुमक्खियों आदि की संख्या में कमी के कारण फसलों की उत्पादकता प्रभावित होने लगी है।

बादाम जैसी कई पादप प्रजातियों में तो शत-प्रतिशत परागण ही ऐसे परागणकर्ता कीटों द्वारा किया जाता है। इसी प्रकार असंख्य कीट प्रजातियों का जीवन भी विविध पुष्पों के पराग या इन पौधों के फल, छाल आदि पर अवलम्बित होता है। विविध फसलों एवं फलों के बगीचों की उत्पादकता, इन परागणकर्ता कीटों यथा मधुमक्खियों, तितलियों, पतंगों, भ्रमरों, शलभ आदि द्वारा किये जाने वाले परागण पर निर्भर होने से इन कीटों की विविधता व सघनता, आज हमारी खाद्य सुरक्षा के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाती है। इन विविध फसलों में परागण करने वाली इन मधुमक्खियों, तितलियों व अन्य कीट-पतंगों की अनेक प्रजातियाँ, अपने आहार व आवास हेतु, आधा या पौन किलोमीटर से आगे भी नहीं जा पाती हैं। ऐसी छोटी सी परिधि में ही भ्रमण में सक्षम कीटों के अस्तित्व के रक्षण के लिये इतनी छोटी परिधि में ही सब ऋतुओं व महीनों में पुष्पित व फलित होने वाले पेड़-पौधों का होना भी परम आवश्यक हो जाता है।

इसी प्रकार अनेक फलभक्षी पक्षी भी 2-3 या 5 किलोमीटर से दूर नहीं जा पाते हैं। उनके लिये भी ऐसी छोटी सी परिधि में ही ऋतुचक्र से, प्रत्येक मौसम व प्रत्येक माह में फल देने वाले पेड़-पौधों का होना परमावश्यक है। प्रकृति में अनादिकाल से, पारम्परिक रूप से ऐसी जैव विविधता सभी क्षेत्रों में पायी जाती रही है जिससे कीट पतंगों व पक्षियों का वर्ष भर, प्रतिमाह व प्रति दिन आहार हेतु पुष्प व फल सुलभ हो जायें। लेकिन, विगत 5-6 दशकों में हुये वन-विनाश के बाद आज प्रकृति प्रेमवश किये जाने वाले पौधारोपण में अक्सर ऐसी वांछित जैव विविधता का अभाव देखा जाता है। सामान्यतया आजकल हो रहे वृक्षारोपण में नीम की ही सर्वाधिक बहुलता होती है या कुछ सौन्दर्यवर्द्धक पेड़ों यथा गुलमोहर, अमलतास, कचनार, शीशम आदि की भी बहुलता देखी जाती है। इस प्रकार के एकाकी या केवल 3-4 प्रकार के पौधों के पौधारोपण जिसे मोनो-कल्चर कहा जाता है या सीमित प्रकार के फलरहित व मात्र सौन्दर्यवर्द्धक प्रजातियों के वृक्षारोपण के कारण प्रकृति में अपूरणीय पारिस्थितिकीय असन्तुलन उत्पन्न हो रहा है। अनेक पर्यावरण-

प्रेमी स्वैच्छिक संगठन आजकल पृथ्वी को हरीतिमा युक्त करने के लक्ष्य से कई स्थानों पर पूरी की पूरी नीम परियोजना जैसी एकाकी पौधों के रोपण की भी योजना अपना कर प्रचुरता में नीम या किसी एक या सीमित प्रकार के पेड़ों के ही पौधारोपण में संलग्न हो जाते हैं। लेकिन, नीम, अशोक व अमलतास जैसी एकल या सीमित प्रजातियों में से प्रत्येक पर पुष्पों व फलों के आने की अवधि वर्ष में एक बार मौसम के अनुसार लगभग 15–20 दिन की ही रहती है। इसलिये उस अवधि में तो किसी भी स्थान विशेष पर मधुमक्खियों, तितलियों, पतंगों, भृंगों, बीटल्स आदि परागणकर्ता कीटों को अथवा फल भक्षी पक्षियों को पुष्पों का पराग व फलों से आहार मिल जाता है। लेकिन, उसके बाद में कई किलोमीटर तक अन्य वांछित प्रजाति के पेड़-पौधे नहीं होने से कीट व पक्षी आहार के अभाव में बड़ी संख्या में विलुप्त होते चले जा रहे हैं। कृषि में कीटनाशी रसायनों अर्थात पेस्टीसाइड्स के अति प्रयोग से फसलों के मित्र कीटों का तेजी से विलोपन हुआ है और कीटों के विलोपन से मोर व बगुले से लेकर टिटहरी पर्यन्त सभी कीट भक्षी पक्षियों का विलोपन हो रहा है। निओनिकोटिनाइड जैसे कीटनाशकों के फसलों पर छिड़काव के बाद उन फसलों से पराग ग्रहण करने वाली मधुमक्खियों में स्मृतिलोप हो जाने से वे अपने छत्तों पर नहीं लौट पाती हैं और इससे यूरोप में भारी मात्रा में मधुमक्खियों का लोप हुआ है।

इसी प्रकार घटती जैव विविधता के कारण फसलों के अनेक मित्र कीटों के विलोपन से आज जहाँ पर-परागण में आयी कमी से फसलों की उत्पादकता में ह्रास हो रहा है, वहीं अनेक पेरासाइटॉइड कहे जाने वाले उन परजीवी कीटों, जिनका जीवन चक्र फसलों को नष्ट करने वाले कीटों व कृमियों पर पूरा होता है, के विलोपन से भी हमारी निर्भरता उत्तरोत्तर, अत्यन्त घातक कीटनाशी रसायनों पर बढ़ती जा रही है। इन कीटनाशी रसायनों से आज चर्म रोग, यकृत विकार व गुर्दों में विकृति, पार्किनसॉनिज्म व कैंसर जैसी अनगिनत असाध्य बीमारियाँ, महामारी की सी तेजी से बढ़ रहीं हैं। बिना पेस्टीसाइड फसलों को कई घातक कीटों से बचाने में सक्षम उपर्युक्त पेरासाइटॉइड श्रेणी के कीटों के कई दर्जनों संकुल हैं, जिनका जीवन-चक्र विविध फसलों पर लगने वाले कीटों पर ही पूरा होता है। इसलिये ये फसलें बिना कीटनाशी रसायनों के ही अनादिकाल से इन पेरासइटॉइड कीटों के बल पर सुरक्षित रहती आयीं हैं। इन पेरासाइटॉइड श्रेणी के कीटों के रहते किसी भी फसल या फलों के बगीचों पर उस फसल या फलों को नुकसान पहुँचाने वाले किसी कीट का प्रकोप होने की दशा में, उस कीट प्रकोप-ग्रस्त फसल या उन फलों के वृक्षों में प्रकृति-जन्य ऐसे सुगन्धित जैव रसायनों का संश्लेषण होता रहा है जिनकी सुगन्ध से वे पेरासाईटाइड श्रेणी के परजीवी कीट आकृष्ट होकर आ जाते थे, जो उस फसल या फल के नाशक कीटों को समाप्त कर देते थे और वह फसल या फलों के बगीचे, पेरासाइटॉइड श्रेणी के इन मित्र कीटों के प्रताप से बच जाते थे। लेकिन, विविध फसलों के ये मित्रवत कीट जो उनको नुकसानदेह कीटों से बचाते रहे हैं, उनको आश्रय देने वाले वृक्षों के आस-पास होने पर ही यह जैविक कीट नियन्त्रण सम्भव होता था। इस हेतु केवल एकाकी अथवा मात्र तीन-चार प्रकार के वृक्षों का वृक्षारोपण न कर पारम्परिक रूप से किसी भी क्षेत्र में होते आये सभी विविध पेड़-पौधों को पुन: विकसित करना आवश्यक है।

पौधारोपण योग्य कुछ पेड़-पौधों की सूची नीचे दी जा रही है। इनमें एक छोटी सूची व दूसरी बड़ी है। लेकिन, हमें यहीं तक सीमित न रहकर अपने पौधारोपण में पूरी विविधता रखनी चाहिये। इनमें कुछ छोटे छोटे प्रसारी पौधों की भी सूची है। पेड़ों के बीच-बीच में इनका भी प्रसार होना चाहिये।

पेड़ पौधों की छोटी सूची - कदम्ब, खजूर, बरगद, पीपल, रोहिड़ा, मीठा टीमरू, गूलर, खेजड़ी, पलाश/खाखरा, कैर/करीर, अंजीर, इमली, सीताफल, सागवान, मौलसिरी, शहतूत, जंगल जलेबी (कीकर), चन्दन, अर्जुन, अनार, बहेड़ा, देशी बबूल, अमलतास, चिलबिल, खैर, बैर (झाड़ी बेर व बड़े बेर), खजूर, महुआ, अमरूद, आम, आँवला, गोन्दा बड़ा (लिसोड़ा), गोन्दा छोटा, जामुन, रायण, सेमल पेड़ पौधों की बड़ी सूची - अतिबला, अर्क/आक, अगर, अगस्त, अजवायन, अमलतास, अनन्तमूल, अपामार्ग, अतिस, अडूसा/वासा, अशोक, अंकोल, असगन्ध, आवँला, इन्द्रायण, एरण्ड, कचनार, कट्फल, करंज, करौंदा, कण्टकारी, काकमाची, कासनी, कालिहारी, कालमेघ, काकड़ासिंगी, कीड़ामारी, कुटज, कुचला, केर, कैथ, खिरनी, गम्भारी, गुग्गुल, गुडूची/गिलोय, गुलतुर्रा, गोरखमुण्डी, घृतकुमारी, चक्रमर्द/पुवाड़, चम्पा, चमेली, चालमोगरा, चिर्मी, चित्रक, चिरायता, चोपचीनी/सदासुहागिन, चाँवलिया कन्द, छतिवन (संप्तपर्ण), जलधनियाँ, जयन्ती, जामुन, जायफल, जमालगोटा, जवासा, ट्राइडेक्स, ढाक (पलाश), तालमखाना, तालीस पत्र, तीसा (अलसी), तिलपुष्पी, तुलसी, दुद्धी, घतूरा, धातकी/धाय, निर्गुण्डी, पाषाणभेद, पित्त पापड़ा, पीलू/गेस्वाक, पारिजात/हरसिंगार, द्रोणपुष्पी, बकायन, बादाम, ब्राह्मी, भाँगरा/भृंगराज, मकोय, मधुमति, मुस्तक/मोथा, मालावार नीम, मूर्वा, मोगरा, रक्त पुनर्नवा, रतनजोत, राजगिरा, रास्ना, रीठा, रेबन्दचीनी, लज्जालु या लाजवन्ती, वज्रदन्ती, शाहतरा, शंखपुष्पी, शतावरी, सरफोंका, सत्यनाशी/पीलाधतूरा, सर्पगन्धा, सहदेवी, सावा, सागवान, सहिजन, सेमल, नरगिस, नागफणी एवं विविध थूहर, वन तुलसी, वरूण, हरमल, हरड़, हिनरपदी, सभी प्रकार की घास। ❑

(कुलपति, पेसेफिक वि.वि., उदयपुर)

पर्यावरण धर्म और भारत

अध्यात्म आधारित, 'तेन त्यक्तेन भुञ्जिथाः' जैसी भारतीय उक्तियाँ पूर्णतः वैज्ञानिक हैं। ये उक्तियाँ कानूनों से अधिक प्रभावी रही हैं। बच्चों को केवल किताबी ज्ञान नहीं अपितु संस्कार देकर पर्यावरण को संरक्षित किया जा सकता है। धर्म केन्द्रित भारतीय संस्कृति को 'धर्म निरपेक्षता' नामक गैरवैज्ञानिक सोच के कारण बहुत हानि हो चुकी है। अब समय आ गया है, जब ईशोपनिषद् व गीता जैसे, पंथ-निरपेक्ष व मानव हितकारी ग्रन्थों से बच्चों को परिचित कराया जावे और यह स्वीकार किया जावे कि पर्यावरण प्रदूषण के राक्षस को आध्यात्मिकता से ही मारा जा सकता है। भारत में धर्म व वैज्ञानिक दृष्टिकोण एक दूसरे के पर्याय हैं। अवैज्ञानिक भौतिकवादी सोच ने, मानवता को ऐसे संकट में डाल दिया है, जिसका हल उसके पास नहीं है।

❑ **विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी**

अंग्रेजी शिक्षा से शिक्षित लोग, भारत के स्थान पर पश्चिम को विज्ञान का जन्म स्थल मानते हैं। कुछ प्रभावी हिन्दी विज्ञान लेखक दावा करते हैं कि भारत ने विज्ञान यूनानियों से सीखा। ऐसे में आम आदमी ऐसा सोचने लगे तो कोई आश्चर्य नहीं होगा। 'भारत और आधुनिक विज्ञान' शीर्षक के आलेख में दावा किया गया कि सम्राट अशोक के जमाने में भारत का सम्पर्क यूनानियों से हुआ तो भारत में आधुनिक विज्ञान का प्रसार हुआ। विज्ञान को प्राचीन व आधुनिकता के खाँचों में नहीं बाँटा जा सकता। विज्ञान की उपलब्धियाँ प्राचीन व आधुनिक हो सकती हैं मगर विज्ञान तो वही है जिसका उल्लेख वेदों व गीता में आया है। पश्चिमी चकाचौंध से प्रभावित लेखक, जगदीशचन्द्र बोस, सी.वी.रमन आदि भारतीय वैज्ञानिकों की उपलब्धियों को भी नकार देते हैं। वे कहते हैं कि भारतीय वैज्ञानिकों की उपलब्धियों का कारण अंग्रेजी शिक्षा थी।

पर्यावरण परिवर्तन का संकट

आज पूरा विश्व पर्यावरण परिवर्तन की मार से त्रस्त है। अभी भारत के अनेक राज्यों में अचानक आए तूफान से जानमाल की भारी हानि हुई है। विनाशकारी तूफान के कारणों को वैज्ञानिकों ने मानव जन्य माना है। इस पर गम्भीरता से विचार करें तो पश्चिम में हुए वैज्ञानिक विकास की पोल खुल जाती है। पश्चिम ने भौतिक विज्ञान को ही सम्पूर्ण विज्ञान मान कर उसे आगे बढ़ाया। उस भौतिक प्रगति ने ही आज भारत सहित सम्पूर्ण विश्व को प्रलय के सामने खड़ा कर दिया है। इसी कारण स्टीफेन हॉकिन्स जैसे विश्व विख्यात वैज्ञानिक 100 वर्षों की अल्प अवधि में, मानव को पृथ्वी छोड़ अन्यत्र बसने की सलाह दे रहे हैं। हॉकिन्स जैसे लोगों का मानना है कि पृथ्वी के निरन्तर बिगड़े पर्यावरण के कारण मानव संस्कृति नष्ट हो सकती है।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा

संयुक्त राष्ट्रसंघ के पर्यावरण परिवर्तन सम्मेलन में तैयार की गई रूपरेखा (UNFCCC) का प्रमुख ध्येय वायुमण्डल में ग्रीन हॉउस गैसों की

मात्रा को स्थिर करना है। मानव द्वारा किए गए अनियन्त्रित भौतिक विकास ने पर्यावरण परिवर्तन का संकट उत्पन्न किया है। सारा विवाद ग्रीन हॉउस गैसों के उत्पादन को सीमित करने पर अटका हुआ है। ऐसे में हजारों वर्ष पूर्व दिया गया भारतीय विमर्श याद करना आवश्यक है–

ईशावास्यमिदँ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।
– ईशोपनिषद्

संसार के चल व अचल सभी स्वरूपों में ईश्वर का वास है। मानव तेरा कुछ भी नहीं है। अतः हर व्यक्ति को चाहिए कि प्रकृति के संसाधनों का उपयोग, आवश्यकताओं को न्यूनतम रखते हुए करें। संयुक्त राष्ट्रसंघ ग्रीन हॉउस गैसों के उत्पादन को सीमित रखने की बात आज कर रहा है, वह बात भारत में हजारों वर्ष पूर्व से प्रचलन में है। आम लोग इसका पालन करते रहे हैं।

अध्यात्म व विज्ञान को जोड़ कर व्यवहार करने के कारण ही भारतीय संस्कृति फली फूली। विश्व के अधिकांश क्षेत्रों में भारतीय संस्कृति का प्रसार हुआ। परेशानी तब पैदा हुई जब अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव में अध्यात्म को अंधविश्वास कह कर हम 'धर्म' से दूर हो गए। संस्कृत के 'धर्म' शब्द के समकक्ष अंग्रेजी में कोई शब्द नहीं है। भारत में 'धर्म' का अर्थ पूजा या उपासना नहीं है। भारत में 'धर्म' का अर्थ प्रकृति प्रदत्त कर्त्तव्य का पालन है। यही कारण है कि भारत में ईशोपनिषद् व गीता जैसे पंथ निरपेक्ष मानव हितकारी ग्रन्थ लिखे गए। अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव में हमने इनकी उपेक्षा की मगर आज विश्व इनके सत्य को स्वीकार रहा है।

कण कण में भगवान

अद्वैतवाद के माध्यम से भारत में हजारों वर्ष पूर्व यह तथ्य प्रतिपादित हो गया था कि सम्पूर्ण सृष्टि एक ही तत्त्व 'ईश्वर' से बनी है। कण कण में भगवान कह कर सरलता से यह संदेश आम जनता तक पहुँचा दिया गया। विज्ञान ईश्वर शब्द का प्रयोग नहीं करते हुए भी स्वीकार रहा है कि सम्पूर्ण सृष्टि एक इकाई है। सम्पूर्ण सृष्टि में ऊर्जा व पदार्थ के अतिरिक्त शून्य है। आइन्स्टीन का समीकरण बताता है कि ऊर्जा व पदार्थ एक दूसरे में परिवर्तनीय हैं। स्पष्ट है कि सम्पूर्ण सृष्टि एक ही तत्त्व का विस्तार है। हजारों वर्ष पूर्व दिया गया अद्वैतवाद का विचार भारत की बड़ी खोज है। दु:ख होता है जब कुछ भारतीय विज्ञान लेखक अद्वैतवाद पर गर्व करने के बजाय उसे वैज्ञानिक अनुसंधान में बाधक बताते हैं।

पर्यावरण विज्ञान में ईकोसिस्टम की अवधारणा कहती है कि सृष्टि के अजैविक (जल, वायु, धरती आदि) व जैविक (जन्तु, वनस्पति व सूक्ष्मजीव आदि) घटक आपस में संबंधित हैं। एक के साथ छेड़–छाड़ अन्य सभी को प्रभावित करती है। अतः प्रकृति के कार्यों में हस्तक्षेप करना खतरनाक हो सकता है। आज बायोस्फेयर के नाम से पूरी पृथ्वी को एक इकाई माना जा रहा है। क्या यह अद्वैतवाद के अनुरूप नहीं है?

भारत में हजारों वर्ष पूर्व यह स्वीकार लिया गया था कि जल, थल, जन्तु, वनस्पति व सूक्ष्म जीव आदि सभी में ईश्वर का वास है। सभी एक दूसरे से जुड़े हैं। अध्यात्म से जुड़ी इन शिक्षाओं का पूर्ण पालन भी होता रहा। अध्यात्म के कारण ही भारत में जलस्रोत, वन व वन्यजीव सुरक्षित रहे। जोधपुर में चिंकारा शिकार प्रकरण इसका उदाहरण है। आज करोड़ों रुपए खर्च करके भी जन्तु व वन संरक्षण के अभियान सफल नहीं हैं। हजारों जातियाँ विलुप्त होती जा रही हैं। अध्यात्म रहित विज्ञान से उत्पन्न भौतिकवाद ने विश्व को बहुत हानि पहुँचाई है। आधुनिकता के नाम पर बच्चे को पारिवारिक व क्षेत्रीय परम्पराओं से काटना महँगा पड़ रहा है।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।

यह वाक्य भारत में हजारों वर्षों से प्रचलित है। समाज इसका पालन भी करता है। इसी से भारतीय संस्कृति संरक्षित रही है। अब विज्ञान ने, 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' की अवधारणा की पुष्टि कर दी है। नासा की ओर से अनुसंधान करते हुए वैज्ञानिक जेम्स लवलोक ने प्रतिपादित किया है कि पृथ्वी एक जीवित इकाई की तरह व्यवहार करती है। पृथ्वी पर पनपी विपुल जैव विविधता का कारण जीवों व पृथ्वी के मध्य संतान व माता जैसा संबंध बनना है। जेम्स लवलोक व मार्गुलिस ने 1974 में धरती व जीवों के संबंधों को गैअन (धरती माता) नियमन सिद्धान्त के रूप में दुनिया के सामने रखा है। नासा द्वारा अन्तरिक्ष में किसी पिण्ड पर जीवन की खोज इसी सिद्धान्त के आधार पर की जा रही है। यह आध्यात्मिकता का विस्तार है।

अध्यात्म आधारित, **'तेन त्यक्तेन भुञ्जिथा'** जैसी भारतीय उक्तियाँ पूर्णतः वैज्ञानिक हैं। ये उक्तियाँ कानूनों से अधिक प्रभावी रही हैं। बच्चों को केवल किताबी ज्ञान ही नहीं अपितु संस्कार देकर पर्यावरण को संरक्षित किया जा सकता है। धर्म केन्द्रित भारतीय संस्कृति को 'धर्म निरपेक्षता' नामक गैरवैज्ञानिक सोच के कारण बहुत हानि हो चुकी है। अब समय आ गया है, जब ईशोपनिषद् व गीता जैसे पंथ–निरपेक्ष व मानव हितकारी ग्रन्थों से बच्चों को परिचित कराया जावे और यह स्वीकार किया जावे कि पर्यावरण प्रदूषण के राक्षस को आध्यात्मिकता से ही मारा जा सकता है। भारत में धर्म व वैज्ञानिक दृष्टिकोण एक दूसरे के पर्याय हैं। अवैज्ञानिक भौतिकवादी सोच ने, मानवता को ऐसे संकट में डाल दिया है, जिसका हल उसके पास नहीं है। ❑

(बाल साहित्य एवं विज्ञान विषयक लेखक)

प्लास्टिक प्रदूषण और भारतीय जीवन दृष्टि

मानव-जीवन पर मंडराते इस खतरे के निराकरण हेतु हमें भारतीय जीवन दृष्टि को अपनाना होगा। भारतीय जीवन दृष्टि प्रकृति के साथ सहयोग, सह अस्तित्व और पारस्परिक लेन-देन पर आधारित है। कहा भी गया है 'धर्मो रक्षति रक्षितः' अर्थात् यदि हम धर्म की रक्षा करेंगे तो धर्म हमारी रक्षा करेगा। यही बात प्रकृति पर भी लागू होती है। यदि हम प्रकृति की रक्षा करेंगे तो प्रकृति हमारी रक्षा करेगी। इसलिए पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं के प्रति 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' के भाव का विस्तार करना होगा। पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाले कार्य से बचना होगा और पर्यावरण संरक्षण करने वाले कार्यों और व्यवहार को अपनाना होगा।

❑ डॉ. बुद्धमति यादव

हम प्रकृति से टूट गये हैं
जिस डाली को पकड़े थे हमारे हाथ
उससे हमारे हाथ छूट गये हैं
और अब हम एक गति में हैं
ज्यादातर लोग समझ रहे हैं
हम प्रगति में हैं।

पर्यावरण प्रदूषण के सन्दर्भ में भवानीप्रसाद मिश्र की ये पंक्तियाँ बहुत सटीक प्रतीत होती हैं। विकास की दौड़ में मानव प्रकृति से दूर होता जा रहा है। ये प्रकृति ही जीवन मात्र के अस्तित्व का आधार है। पृथ्वी पर जीवनानुकूल पर्यावरण के कारण ही जीवन विद्यमान है। इस पर्यावरणीय अनुकूलता को बनाये रखना समस्त मानव जाति का पुनीत कर्तव्य है। मनुष्य के निरंतर बढ़ते ज्ञान और विज्ञान ने जहाँ एक ओर मानव जीवन को सुगम और सरल बनाया है वहीं अनेक ऐसे पदार्थों व कार्यों को भी प्रेरित किया है जिससे प्राकृतिक सन्तुलन प्रभावित हो रहा है। उन्हीं में से एक है - प्लास्टिक।

प्लास्टिक हमारे घरों में, गलियों, मुहल्लों, सड़कों, शिक्षा संस्थानों, ऑफिसों, शादी-समारोहों, जंगलों, मैदानों आदि सभी जगहों पर देखा जा सकता है। इसकी व्यापकता से स्पष्ट है कि ये आज हमारे जीवन का आवश्यक अंग बन चुका है। दिन की शुरूआत से लेकर रात को सोने तक प्लास्टिक किसी न किसी रूप में हमारे जीवन पर आधिपत्य जमाकर बैठा है और हम सब इन चीजों के प्रयोग के दुष्परिणामों से अनजान, निरंतर प्रयोग कर जीवन को सरल और सुगम मान रहे हैं, लेकिन धीमे जहर के रूप में यह प्लास्टिक हमारे जीवन के लिए खतरा बनता जा रहा है। प्लास्टिक के अत्यधिक प्रयोग ने 'प्लास्टिक प्रदूषण' का रूप धारण कर लिया है। 'प्लास्टिक प्रदूषण' को भूमि पर विभिन्न प्रकार की प्लास्टिक सामग्री के संचय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

प्लास्टिक का दैनिक जीवन में अत्यधिक प्रयोग का सबसे बड़ा कारण है कि यह महँगा नहीं होता है, टिकाऊ होता है और विभिन्न रंगों और आकार-प्रकार में उपलब्ध होता है। अधिकांश प्लास्टिक सामग्री को एक बार इस्तेमाल करने के बाद उसे फैंक देना ही एकमात्र विकल्प रहता है। इसी से प्लास्टिक प्रदूषण की स्थिति उत्पन्न होती है। प्लास्टिक लम्बे समय तक कचरे में पड़े रहने से भी नष्ट नहीं होता। इसे नष्ट होने में हजारों साल लग जाते हैं। उस दौरान यह जहाँ-तहाँ भी विद्यमान रहता है, वहाँ के वातावरण में अनेक विषैले प्रभाव छोड़ देता है। यथा-नहर, नदी, झील, सागर, तालाब आदि जल स्रोतों में रहने पर जल के निकास को बाधित करता है तथा जल की गुणवत्ता को भी धीरे-धीरे कम कर देता है। समुद्र और महासागर में रहने वाले जलीय जीव-जन्तुओं - मछली, कछुए आदि के अस्तित्व को भी नुकसान पहुँचाता है। गड्ढों में डालने पर यह परत दर परत जमा होकर मिट्टी को प्रदूषित करता है, जिससे मिट्टी की उर्वरक क्षमता प्रभावित होती है। भूमि पर

विचरण करने वाले जीव-जन्तुओं के अस्तित्व को नुकसान पहुँचाता है। यदि इसे एकत्रित करके जलाने का प्रयास किया जाता है तो जलने की प्रक्रिया में विषैले रसायन वायुमंडल में फैलकर मानव जाति में त्वचा एवं श्वसन सम्बंधी अनेक बीमारियों के पैदा होने का कारण बनता है। इस प्रकार प्लास्टिक प्रदूषण से वायु, जल, पृथ्वी सभी प्रभावित होते हैं, इसीलिए आज का मानव कह उठता है - **''मलय सुगन्धित हवा नहीं है/दम घुट-घुट है जाता/धुँआ धूल भरी साँसों से/जीवन घट जाता/ जल को कहते हैं जीवन, पर/वह भी रहा न निर्मल/कल्मश भरी अपावनी सी/है गंगा की कल-कल/हवा प्रदूषित, नीर प्रदूषित/प्रदूषित सब संसार/कैसे जिएं कि जीने का है/कोई नहीं आधार''।**

मानव-जीवन पर मंडराते इस खतरे के निराकरण हेतु हमें भारतीय जीवन दृष्टि को अपनाना होगा। भारतीय जीवन दृष्टि प्रकृति के साथ सहयोग, सह अस्तित्व और पारस्परिक लेन-देन पर आधारित है। कहा भी गया है **'धर्मो रक्षति रक्षितः'** अर्थात् यदि हम धर्म की रक्षा करेंगे तो धर्म हमारी रक्षा करेगा। यही बात प्रकृति पर भी लागू होती है। यदि हम प्रकृति की रक्षा करेंगे तो प्रकृति हमारी रक्षा करेगी। इसलिए पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं के प्रति **'आत्मवत् सर्वभूतेषु'** के भाव का विस्तार करना होगा। पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाले कार्य से बचना होगा और पर्यावरण संरक्षण करने वाले कार्यों और व्यवहार को अपनाना होगा।

इस हेतु सामान लाने-ले जाने के लिए प्लास्टिक की थैलियों के स्थान पर जूट या कपड़े के थैले का प्रयोग करके तथा दैनिक जीवन में प्लास्टिक निर्मित वस्तुओं के स्थान पर मिट्टी या अन्य धातु निर्मित वस्तुओं को महत्त्व देकर प्लास्टिक का प्रयोग कम किया जा सकता है और पृथ्वी रूपी माता को प्रदूषण से बचाया जा सकता है।

भारतीय जीवन दृष्टि 'जल' को देवता स्वरूप मानकर उसके पूजन की बात कहती है। अतः जलस्त्रोतों को प्रदूषण से बचाने के लिए आवश्यक है कि हम कचरे को चाहे वह किसी भी रूप में हो, नदी, तालाब आदि में नहीं डालें, ऐसा करने से ही जल-स्त्रोत स्वच्छ और पवित्र बने रह सकेंगे। इसी भाँति 'वृक्षों' के पूजन की भी गौरवशाली परम्परा आँवला-नवमी, तुलसी-पूजन, बड़-पूजन, कदली पूजन के रूप में हमारे यहाँ रही है। चूँकि प्रकृति के साथ हमारा मित्रवत् व्यवहार रहता है अतः उसे काटना या क्षति पहुँचाना पूर्णतः वर्जित है। वृक्षों को काटने या क्षति पहुँचाने से पाप लगता है, ऐसी मान्यता के पीछे यही मंतव्य रहा है कि मानव प्रकृति को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचाए। इसके पूजन का भाव यदि मन में होगा तो मानव निश्चित रूप से उसे किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचाएगा। भूमि संरक्षण हेतु 'वृक्षारोपण' आवश्यक है। अतः अधिकाधिक 'पौधारोपण' करने की आवश्यकता है। ऐसा करने से न सिर्फ मानव बल्कि सभी जीव-जन्तुओं की रक्षा भी सम्भव हो सकेगी। हम परिवार के किसी भी व्यक्ति अथवा बालक के जन्मदिवस पर एक पौधा लगाकर उसके पोषण और संरक्षण का दायित्व निवर्हन करेंगे, तो पर्यावरण संरक्षण में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकेंगे। ऐसा करने से ही प्रकृति के साथ संतुलन और सामंजस्य बनाये रखने में मानव समर्थ हो सकेगा और प्लास्टिक प्रदूषण जैसी विकराल समस्या को समाप्त नहीं तो कम अवश्य किया जा सकेगा।

भारतीय जीवन दृष्टि प्राकृतिक सन्तुलन को बनाने के लिए प्रकृति के प्रत्येक अंग में शांति की महत्ता पर बल देती है। इसीलिए 'यज्ञ' के समय पर्यावरण-चेतना की दृष्टि से सदैव यही प्रार्थना की जाती है-

ओउम् द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष गुं,
शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
शान्तिरौषधयः शांतिः वनस्पतयः
शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिः
ब्रह्म शान्तिः सर्व गुं शान्तिः,
शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि
ओउम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

सारांशतः पर्यावरण संरक्षण के प्रति चेतना जगाकर इसके अनुरूप आचरण करके हम प्रकृति के साथ सामंजस्य, संतुलन बैठाकर विकास की ओर बढ़ेंगे तो प्रकृति और मानव दोनों के लिए कल्याणकारी होगा। भारतीय जीवन दृष्टि ही एकमात्र ऐसा विकल्प है जिसको अपनाकर समस्त मानव जाति सुखी हो सकती है। इसीलिए कहा गया है -

सर्वे भवन्तु सुखिनः
सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु
मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।

(एसोसिएट प्रोफेसर, जी.डी. कॉलेज, अलवर)

प्लास्टिक मुक्त परिसर : शिक्षण संस्थाओं का दायित्व

❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

वैश्विक स्तर पर डबलिन सिटी विश्वविद्यालय, आयरिश गणतंत्र ने परिसर को 2020 तक प्लास्टिक रहित बनाने का संकल्प लिया है। भारत में भी इस प्रकार के प्रयास किये जा रहे हैं। दक्षिण भारत स्थित नीलगिरी, सुपर मार्केट ने 'एन्टी प्लास्टिक ड्राइव' 28 अगस्त 2017 से प्रारम्भ की है। केरल का कन्नूर (Kannur) भारत का 'प्रथम प्लास्टिक रहित जिला' बनने का गौरव प्राप्त कर चुका है। यहाँ का ध्येय वाक्य है 'नल्ला नाडू, नल्ला मान्नू' (Nalla Nadu, Nalla Mannu, good village, good soil) अर्थात् अच्छा गाँव, अच्छी भूमि। इसे 5 जून 2017, विश्व पर्यावरण दिवस पर यह सम्मान मिला। पूना स्थित शिक्षण संस्थाओं ने नगर निगम के साथ, स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत, पूना सहित सम्पूर्ण राष्ट्र को 'प्लास्टिक कचरे रहित' बनाने का संकल्प लिया है।

आज वैज्ञानिक अनुसंधानों के कारण हमारी जीवन शैली में परिवर्तन आया है, हमारे जीवन पर आधुनिकता के साथ-साथ वैज्ञानिक अनुसंधानों का भी प्रभाव पड़ा है। इसी कारण प्लास्टिक का उपयोग हमारे दैनिक जीवन में अत्यधिक होने लगा है। हम प्लास्टिक बॉटल, कप, स्ट्रा, बैग, प्लेट्स, पैकिंग मटैरियल, ब्रश, पेन व न जाने कितनी वस्तुओं का उपयोग प्रतिदिन करते हैं, इसी कारण इस युग को 'प्लास्टिक युग' कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। यद्यपि प्लास्टिक का उपयोग जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हो रहा है परंतु उसका दुष्प्रभाव भी दृष्टिगोचर होने लगा है। इसी कारण 'विश्व पृथ्वी दिवस' 22 अप्रैल 2018 का ध्येय वाक्य है 'प्लास्टिक प्रदूषण की रोकथाम'। प्रस्तुत आलेख में प्लास्टिक की खोज, उपयोग, दुष्प्रभाव, रासायनिक संरचना व रोकथाम से सम्बन्धित विषयों पर लिखने का प्रयास किया गया है, क्योंकि 5 जून 'विश्व पर्यावरण दिवस' है। अत: दोनों ही दिवसों का महत्त्व है। पर्यावरणीय संसाधनों का दीर्घकालिक उपयोग, विकास की आधारशिला होती है अत: दीर्घकालिकता प्रोत्साहन (Sustainability Promotion) समय की आवश्यकता है, जिसे समाज में प्रचारित करना है, इस कार्य को शिक्षण संस्थाएँ बेहतर ढँग से कर सकती हैं। मानव का अस्तित्व प्रकृति सापेक्ष है, इसी कारण प्रकृति का संयमित उपयोग मानव ने अनादि काल से किया, परंतु आधुनिकता की चकाचौंध के कारण प्राकृतिक संसाधनों का दोहन होने लगा व मानव ने वैकल्पिक अनुसंधानों पर जोर दिया। इसी सन्दर्भ में प्राकृतिक रबर की खोज पादप (Hevea brasiliensis) के लेटेक्स (Latex) से की गई, यह कार्बनिक यौगिकों का पॉलीमर (Polymer) है। इसका उपयोग बढ़ने के कारण इसकी माँग भी बढ़ने लगी, माँग व आपूर्ति के असंतुलन ने ही मानव को कृत्रिम रबर या प्लास्टिक की खोज के लिए प्रेरित किया, क्योंकि दोनों ही पॉलीमर हैं।

प्रथम प्राकृतिक व दूसरे कृत्रिम प्लास्टिक को 1907 में, बेल्जियम मूल के अमेरिकी वैज्ञानिक लिओ हेन्ड्रिक बैकलेण्ड (Leo Hendrik Backeland) ने आविष्कृत किया। इनके द्वारा बनाया प्रथम प्लास्टिक बैकेलाइट कहलाया।

प्रारम्भिक दशकों तक पॉलीइथाइलिन (Polyethylene) इतना प्रसिद्ध नहीं था, 1947 में प्लास्टिक बोतल का व्यावसायिक उपयोग होने लगा। वैज्ञानिक उपकरणों में प्लास्टिक का व्यापक उपयोग होने लगा। एक तरफ हम वैज्ञानिक अनुसंधानों की ओर अग्रसर हो रहे हैं, दूसरी ओर लगातार आधुनिक खोजों ने जीवन-दृष्टि को परिवर्तित कर दिया। हम भूल गये कि हमारा अस्तित्व इस धरा के कारण है। इस संदर्भ में 1962 में राहेल कार्सन (Rachel Carson) ने ''शांत झरना'' (Silent Spring) नामक पुस्तक में कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग के पृथ्वी पर प्रभाव का वर्णन किया व कीटनाशकों के उपयोग के निषेध पर जोर दिया। इसी प्रकार 22 अप्रैल 1970 को अमेरिका के 150 वर्षों के औद्योगिक विकास के विरुद्ध विश्व का सबसे बड़ा पर्यावरणीय जनचेतना आन्दोलन हुआ।

औद्योगिक विकास के दुष्प्रभावों को वर्णित करते हुए इससे जन-मानस में पर्यावरणीय क्रांति का सूत्रपात किया। इसमें प्रमुख योगदान विस्कोंसिन के सीनेटर जेराल्ड नेल्सन (Gayrald Nelson) का रहा, तत्पश्चात् शुद्ध जल, हवा आदि के नियम बने। इससे पूर्व 1969 में केलिफोर्निया के सांता बरबरा (Santa Barbara) तट में तेल हेतु किये गये खनन के कारण समुद्रीय जीव-जंतुओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, इस घटना ने पर्यावरण प्रेमियों का ध्यान आकर्षित किया व पृथ्वी का सम्मान करने का विचार आया। इसी परिप्रेक्ष्य में यूनेस्को सम्मेलन जो सेन फ्रांसिस्को (San Fransisco, 1969) में आयोजित किया गया, इसमें जनरल सेकेट्री यू थाँट ने संयुक्त राष्ट्र संघ में पृथ्वी के सम्मान व शांति की अवधारणा हेतु 21 मार्च का दिवस निर्धारित

किया। यह बसंत का प्रथम दिवस होता है। जब रात-दिन बराबर होते हैं। इस प्रकार 22 अप्रैल विश्व पृथ्वी दिवस के रूप में वैश्विक स्तर पर मनाया जाने लगा।

ब्राजील में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन (1972) में पृथ्वी को प्रदूषण रहित रखने हेतु पुनः चक्रण (Recycling) पर ध्यान आकर्षित किया गया। प्लास्टिक के पुनः उपयोग हेतु प्रो. राजगोपालन वासुदेवन, थिगराजर (Thiagarajar), अभियांत्रिकी महाविद्यालय मदुरई (Madurai), ने प्लास्टिक का सड़क बनाने में उपयोग कर ''भारत के प्लास्टिक मानव (Plastic Man of India)'' नाम से सम्मान पाया। यह पुनः चक्रण की धारणा को पुष्ट करता है। उपर्युक्त विवरण यह स्पष्ट करता है कि वैश्विक स्तर पर पृथ्वी के संरक्षण व संवर्द्धन हेतु प्रयास किये जा रहे हैं। परंतु पृथ्वी को सबसे अधिक खतरा बढ़ते प्लास्टिक उपयोग से ही हो रहा है। विश्व स्तर पर यदि आँकड़ों पर नजर डाली जाये, तो प्रत्येक मिनट में एक ट्रक प्लास्टिक कचरा समुद्र में डाल दिया जाता है। अमेरिका, तथाकथित विकसित राष्ट्र, जो प्रतिदिन 500 मिलियन स्ट्रा उपयोग में लेता है, इससे पृथ्वी की परिधि को दो बार नापा जा सकता हैं। टायलेट पेपर के उपयोग से 27000 वृक्ष प्रतिदिन नष्ट हो रहे हैं, इस कारण उष्ण कटिबंधीय वर्षा वनों पर प्रभाव पड़ रहा है। उल्लेखनीय है कि हमारे चिंतन ने वन-वर्षा-विकास की अवधारणा को प्रतिपादित किया है। परन्तु पाश्चात्य उपभोक्तावादी संस्कृति के आकर्षण के कारण यह अवधारणा काल के गर्त में समा गई। अन्य आँकड़े बताते हैं कि 2 मिलियन प्लास्टिक बैग का प्रतिदिन विश्व में वितरण होता है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार भारत में 15,342 टन प्लास्टिक अपशिष्ट प्रतिदिन होता है। प्रतिदिन उपयोग में आने वाले प्लास्टिक का जैव-नष्टीकरण (Bio-degradable) नहीं होता है यह प्राकृतिक पारिस्थितिकी में अपघटनीय पदार्थ नहीं है। यह औसत 450 से 1000 वर्षों तक मृदा में रहता है। प्लास्टिक को जलाने पर, यह विषैली गैसें व धुआँ देता है मुख्य रूप से नाइट्रोजन व सल्फर के आक्साइड साथ ही ज्वलनशील कार्बनिक रसायन व विनाइल क्लोराइडह (Vinyl chloride)। इसमें डाइऑक्सिन (Dioxin) नामक कैंसर प्रेरक (Carcinogenic) रसायन भी निकलता है। जर्मनी की गोथे विश्वविद्यालय (Goethe University, Germany)

ने बताया कि प्लास्टिक बॉटल से इस्ट्रोजेनिक पदार्थों (estrogenic compounds) का पानी में रिसाव होता है, मुख्य रूप से बिस्फेनॉल (Bis-Phenol) है, यह मधुमेह, मोटापा, निषेचन आदि पर प्रभाव डालता है।

प्लास्टिक निर्माण में बेंजीन का उपयोग होता है, यह भी कैंसर प्रेरक है। प्लास्टिक से फ्लोराइड, आर्सेनिक, एल्यूमीनियम आदि पदार्थ भी निकलते हैं, जो मानव के लिए घातक हैं। अतः प्लास्टिक के उपयोग के साथ-साथ उसके दुष्प्रभाव भी स्पष्ट हो गये हैं। इसी कारण स्थानीय स्तर, क्षेत्रीय स्तर, राष्ट्रीय व वैश्विक स्तर पर सघन कार्यक्रम चला कर पर्यावरणीय चेतना का विकास करना होगा। वैश्विक स्तर पर डबलिन सिटी विश्वविद्यालय, आयरिश गणतंत्र ने परिसर को 2020 तक प्लास्टिक रहित बनाने का संकल्प लिया है। भारत में भी इस प्रकार के प्रयास किये जा रहे हैं। दक्षिण भारत स्थित नीलगिरी, सुपर मार्केट ने 'एन्टी प्लास्टिक ड्राइव' 28 अगस्त 2017 से प्रारम्भ की है। केरल का कन्नूर (Kannur) भारत का 'प्रथम प्लास्टिक रहित जिला' बनने का गौरव प्राप्त कर चुका है। यहाँ का ध्येय वाक्य है 'नल्ला नाडू, नल्ला मान्नू' (Nalla Nadu, Nalla Mannu, good village, good soil) अर्थात् अच्छा गाँव, अच्छी भूमि। इसे 5 जून 2017, विश्व पर्यावरण दिवस पर यह सम्मान मिला। पूना स्थित शिक्षण संस्थाओं ने नगर निगम के साथ, स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत, पूना सहित सम्पूर्ण राष्ट्र को 'प्लास्टिक कचरे रहित' बनाने का संकल्प लिया है। यह अभियान 13 फरवरी 2016 से प्रारंभ किया गया है। पर्यावरण, वन एवम् जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार ने भी 'प्लास्टिक कचरा रहित अभियान' (Plastic waste free campain) प्रारंभ किया है। यह स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत किया जा रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा स्वच्छ भारत अभियान की गतिविधियों में सहभागिता निभाने वाले छात्रों को अकादमिक क्रेडिट दिया जाए। चॉइस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम में, इलेक्टिव कोर्स के अंतर्गत 'स्वच्छ भारत अभियान' को रखा जाय। हम प्लास्टिक के उपयोग को कम करके धीरे-धीरे 'प्लास्टिक रहित परिसर' अवधारणा की ओर अग्रसर होवें। प्लास्टिक प्रदूषण कैल्कुलेटर (Plastic Pollution Calculator) द्वारा हम यह गणना कर सकते हैं कि हम कितना प्लास्टिक उपयोग में लेते हैं, फिर उसे शून्य तक ले जाएँ। उपर्युक्त परिदृश्य पृथ्वी को प्लास्टिक के दुष्प्रभाव से बचाने का प्रयत्नमात्र ही है क्योंकि जब तक हम पर्यावरण के प्रति मानवीय संवेदनाओं को जाग्रत नहीं करेंगे तब तक पर्यावरणीय संरक्षण की अवधारणा साकार नहीं होगी। अतः सम्पूर्ण वसुन्धरा को प्लास्टिक रहित करना होगा व हमें इसी ध्येय वाक्य को अपनाना होगा।

'थैली छोड़ो, थैला पकड़ो।' अतः शिक्षण संस्थाएँ प्लास्टिक मुक्त परिसर अभियान को प्रोत्साहन प्रदान करें। तभी विभिन्न पर्यावरण संरक्षण दिवसों की सार्थकता होगी। ❑

(विभागाध्यक्ष-पर्यावरण विज्ञान विभाग, सरगुजा विश्वविद्यालय, अम्बिकापुर, छ.ग.)

आज प्राकृतिक दैवीय तत्त्व जल, अग्नि, भूमि, वायु, आकाश सभी मानवीय अज्ञान जनित स्वार्थ कर्मों से प्रकुपित होकर अकल्याणकारी हो गये हैं, प्रदूषण की इस अवस्था में जीव जगत् के सामान्य जीवन में बाधायें आकार वह रोगों का शिकार होता जा रहा है ऐसी अवस्था में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता का वृहत्तर दायित्व हमारी शिक्षण संस्थाओं पर आता है क्योंकि प्राथमिक कक्षाओं से ही बालक को इसकी उत्तम शिक्षा तथा विधि सिखाकर उसको उच्च कक्षाओं तक पूर्णरूपेण पर्यावरण के प्रति जागरूक व कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनाया जा सकता है।

पर्यावरण संरक्षण की भारतीय दृष्टि

❑ **डॉ. ओमप्रकाश पारीक**

पर्यावरण शब्द परि और आङ् उपसर्ग पूर्वक वरणार्थक वृञ् धातु से ल्युट् प्रत्यय लगने पर बनता है, जिसका अर्थ है चारों ओर से आच्छादन करना। विश्वकोश के अनुसार 'पर्यावरण' के अन्तर्गत उन सभी दशाओं, संगठन और प्रभावों को सम्मिलित किया जाता है जो किसी जीव या प्रजाति के उद्भव, विकास एवं विनाश को प्रभावित करती हैं।

आदिकाल से ही भारतीय दृष्टि में पर्यावरण संरक्षण की भावना भरी थी। वेद, वैश्विक सभ्यता एवं संस्कृति के आदि ग्रन्थ हैं जो कि प्रकृति के ही गीत हैं। वैदिक साहित्य में ऋग्वेद सबसे प्राचीन ग्रन्थ है और उसका प्रथम मन्त्र ही प्रकृति को समर्पित है जिसमें ऋषि अग्नि (सूर्य) की स्तुति करता है–

अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्।।

अर्थात् समस्त ऐश्वर्य के स्वामी एवं यज्ञ को सुन्दर रूप से सम्पन्न करने वाले और देवताओं को बुलाने वाले अग्नि का हम वरण करते हैं। इस मंत्र की भावना से भावित ऋषि ने इस चराचर जगत् में निवास करने वाले सभी जीवों के लिये अग्नि तत्त्व को सम्पूर्ण ऐश्वर्य का देने वाला बताया है। वैदिक ऋषियों ने सभी पंच महाभूतों को देव (ईश्वर) का रूप मानकर आराधना की है। अग्नि को देवताओं का दूत, अग्नि देव, जल को वरुण देव, वायु को मरुत् देव, आकाश को पिता एवं देव और पृथ्वी को माता माना है। इस प्रकार भौतिक पञ्चतत्त्वों के समरूप को मानव जाति के लिये श्रेयस्कर मानते हुए इन्हें विकृतियों से बचाये रखना मानव जाति का प्रमुख कर्त्तव्य स्वीकृत किया है।

शुद्ध हवा की महत्ता हमारे लिये बनी रहे इसलिये ऋषि प्रार्थना करता है–

वात आ वातु भेषजं शुभं
मयोभुवोहृदेप्रण आयुंषि तारिषत्
(ऋग्वेद 10/186/1)

ऋग्वेद में कहा गया है कि आकाश से वृष्टि द्वारा प्राप्त होने वाला जल या खोदकर लाया हुआ नहरों का जल तथा जो जल स्वयं झरनों और नदी नालों से बह रहा है ऐसा समुद्र की ओर जाने वाला सब प्रकार का जल मेरा सुख बढ़ावे।

या आपो दिव्या उक्त वां स्रवन्ति।
खनित्रिमा उत वा याः स्वयंजाः
समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता
आपो देवीरिह मामवन्तु (ऋग्वेद 7/49/2)

गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी, नर्मदा, सरयू, कावेरी, शिप्रा की उत्तमता का अत्यधिक गुणगान हमारे द्वारा किया जाता है। इनके जल में स्नान करके व्यक्ति पुण्य व मोक्ष प्राप्त करता है।

यजुर्वेद में पृथ्वी को माता मानता हुआ ऋषि उसके महत्त्व का बखान करते हुये कहता है– हे पृथ्वी माता! तुम हमारा पालन–पोषण उत्तम रीति से करती हो हम कभी भी तुम्हारी हिंसा (दुरुपयोग) न करें–

पृथिवी मातर्मा या हिंसीर्मो
अहं त्वाम् (यजुर्वेद 10/23)

वेदों में वृक्षों का सम्मान ही नहीं अपितु वृक्षों एवं वनों के संरक्षक तथा पालक जनों का भी सम्मान होता था।

नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो वनानां पतये नमः (यजुर्वेद) ऋषि को यह सुविदित था कि पर्यावरण शुद्धिकरण में पशु-पक्षियों का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। पर्यावरण में अस्वच्छता व प्रदूषण पाप है। अतः अथर्ववेद में इन पशु-पक्षियों से पापरूप प्रदूषण व अस्वच्छता को समाप्त करने की प्रार्थना की गयी है।

पार्थिवा दिव्याः पशवः
आख्या उत ये मृगाः।
शकुन्तम् पक्षिणो
ब्रूमस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः।।
(अथर्व. 11/6/8)

हमारी भारतीय दृष्टि में देवताओं के वाहन के रूप में पशु-पक्षियों को अपनाया गया है। विष्णु ने गाय को शिव ने बैल को, दुर्गा ने सिंह को, कार्त्तिकेय ने मयूर को, इन्द्र ने हाथी को, गणेश ने चूहे को, लक्ष्मी ने उल्लू तथा इस प्रकार अन्य सभी ने पशु-पक्षियों को ही वाहन रूप में स्वीकार किया है। भगवान विष्णु की आराधना का यह श्लोक जीव-जन्तुओं एवं वनस्पति के महत्त्व का बखान करता है -

मंगलं भगवान विष्णु मंगलं गरुडध्वजः।
मंगलं पुण्डरीकाक्षः मंगलायतनो हरिः।।

यहाँ गरुड़ पक्षी जगत् तथा पुण्डरीक जलचर तथा वनस्पति जगत् का प्रतीक है।

हमारी भारतीय दृष्टि में प्रातः जब पृथ्वी पर प्रथम बार पैर रखते हैं तो पृथ्वी माता का अभिवादन करते हैं और पैर रखने के लिये क्षमा माँगते हैं -

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।

महाकवि कालिदास भारतीय दृष्टि के सांस्कृतिक प्रतिमान हैं जिनकी वाणी में प्रकृति का शुद्ध चित्रण पर्यावरण संरक्षण का संदेश देता है। परमात्मा परमेश्वर की अष्टमूर्त्तियाँ जो कि प्रत्यक्ष दिखाई देती हैं वे ही अष्टतत्त्व हैं। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, सूर्य, चन्द्र और यजमान रूपी जीव ये सभी तत्त्व हमारी रक्षा करते हैं अतः ये सभी हमारे आराध्य हैं। कालिदास के महर्षि कण्व को शकुन्तला आत्मवत् प्रिय है किन्तु शकुन्तला से भी प्रिय वृक्ष हैं अतः शकुन्तला स्वयं से अधिक वृक्षों को प्रेम करती है वह जब तक वृक्ष-लता पादपों को जल नहीं पिला देती तब तक स्वयं जल ग्रहण नहीं करती, उसे फूल-पत्तों से बने आभूषण अत्यन्त प्रिय थे किन्तु प्रकृति से अत्यन्त स्नेह व लगाव होने के कारण वह उन वृक्षों के फूल व पत्ते नहीं तोड़ती थी अपितु स्वतः नीचे गिरे हुये फूल पत्तों से ही शृंगार करती थी और वृक्षों तथा पौधों में नव कोंपल व नव पत्ते आने पर वह दिन शकुन्तला के लिये उत्सव की भांति होता था -

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्
आधे वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिग्रहं सर्वैरनुज्ञायताम्।
(अभिज्ञान शा. /प्र. /9)

इस प्रकार महाकवि कालिदास ने पर्यावरण के महत्त्व और उसके संरक्षण का सन्देश सहज ही दिया है।

भारतीय चिन्तन धारा में वृक्षों को महत्त्व प्रदान कर उनके संरक्षण की दृष्टि प्राप्त होती है। यहाँ वट वृक्ष में त्रिदेव ब्रह्मा, विष्णु, महेश, पीपल में विष्णु, बिल्व पत्र में गौरी शंकर, आँवले में लक्ष्मी, अशोक में इन्द्र और बुध, तुलसी में लक्ष्मी विष्णु, केतकी में दुर्गा और लक्ष्मी, गूलर में विष्णु और रुद्र, आम्र में लक्ष्मीनारायण, नीम में शीतला माता, पलाश में ब्रह्मा और गन्धर्व, शाल और कदम्ब में कृष्ण का वास स्वीकृत किया है, इन वृक्षों के देव तुल्य (देने वाले) होकर परोपकार के कारण ही इनमें ईश्वर तत्त्व निवास करता है। अतः पर्यावरण संरक्षण हेतु इनके संरक्षण व संवर्धन की आवश्यकता का संदेश हमारे चिन्तन में विद्यमान है।

ऋषियों की मनीषा ने प्रकृति की शक्ति और उसके कल्याणकारी स्वभाव की सुरक्षा के मार्ग ढूँढ़ लिये थे। प्रकृति के विभिन्न पक्ष जैसे वृक्ष, नदियाँ, पर्वत, जीव-जन्तु, वर्षा, बादल, भूमि, सूर्य, तारे, नक्षत्र, अन्तरिक्ष इत्यादि सभी में देवत्व की अर्थात् मानव एवं जगत् को देने और उपकार करने की प्रवृत्ति के अनुभव करने के कारण ये सभी पूजनीय माने गये। इन सभी देवत्व एवं पूजनीय तत्त्वों में मानवीय स्वार्थ एवं अज्ञानतावश अवहेलना कर प्रतिकूल आचरण से आज का विश्व पर्यावरण संरक्षण की समस्या से ग्रसित है। मानव अपने भोग की असीमित प्रवृत्ति में बद्ध आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु निरन्तर प्रकृति का दोहन कर रहा है जिससे सम्पूर्ण पर्यावरण असंतुलित हो गया है। प्रकृति के दैविक तत्त्व प्रकुपित हो गये हैं। हमारे वेद कहते हैं '**आपो अस्मान मातरः**' अर्थात् मानव जलों का पुत्र है क्योंकि ऋषि कहता है कि जैसे माता अपने स्तनपान के रस से बालक को पुष्ट करती है उसी प्रकार जल अपने कल्याणकारी रस से हमें पुष्ट करे। **आपस्पुत्रासो**, इसमें यह भाव स्वाभाविक ही है कि हम माता के समान जलों को पूज्य मानकर उनको स्वच्छ रखते हुये सुरक्षा करें। अथर्ववेद का एक मंत्र कहता है - **माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।**

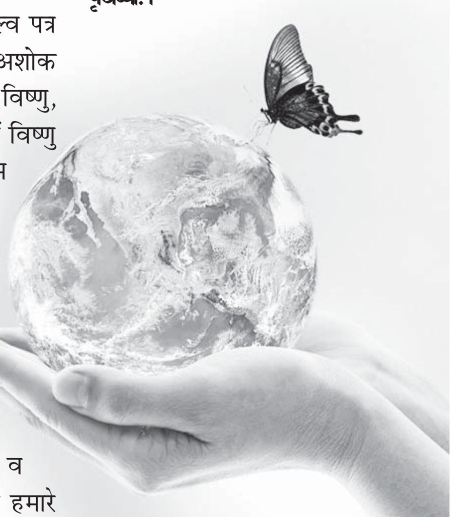

अर्थात् मेरी माता भूमि है मैं पृथ्वी माँ का पुत्र हूँ। द्यौ (स्वर्गलोक) पिता तुल्य व अन्तरिक्ष भ्राता है इस प्रकार मानव का यह कर्तव्य है कि वो इनसे माता-पिता व भ्राता के समान ही व्यवहार करे। प्राकृतिक दैवीय तत्त्वों की आराधना करते हुये हमारे यहाँ यज्ञ और हवन सभी आश्रमों ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास में आवश्यक कर्म के रूप में मान्य थे। भगवान श्री कृष्ण गीता में कहते भी हैं अन्न से प्राणी जीवित रहते हैं। अन्न बादलों से उत्पन्न होता है और बादल यज्ञ से बनते हैं और यज्ञ मनुष्य के उत्तम कर्मों से होता है-

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद् भवन्ति पर्जन्यः यज्ञः कर्म समुद्भवः।।

वस्तुतः यज्ञ जो कि, हवनीय सामग्रियों से किया जाता है वह अपनी उत्तम सुगन्ध व धूम्र से अन्तरिक्ष में व्याप्त होकर पर्यावरण के विषैले तत्त्वों का प्रभाव दूर करता है तथा बादलों का निर्माण करता है। बादल से उत्पन्न वृष्टि जगत् का कल्याण करती है। यज्ञ कर्म में संलग्न मानव न केवल बाह्य यज्ञ करता है अपितु वह अपने शरीर मन, बुद्धि और आत्मा द्वारा आन्तरिक यज्ञ भी सम्पादित करता है। जब वह **इदं न मम** (यह मेरा नहीं है) इस प्रकार बोलता हुआ आहूति को अग्नि में समर्पित करता है तो उसमें स्वार्थ भावनायें समाप्त होकर राग-द्वेष, मद-मोह इत्यादि दोष दूर होते हैं और आत्मा पवित्र होती है। इस प्रकार यज्ञ आन्तरिक व बाह्य पर्यावरण दोनों को शुद्ध कर हमारा उपकार करता है। इसलिये कहा है-

यज्ञो वैश्रेष्ठतमं कर्म - यज्ञ सर्वश्रेष्ठ कर्म है।

आज ध्वनि प्रदूषण की भी समस्या गंभीर हो गयी है। हमारा ऋषि कहता है -

भद्रं कर्णेभिः श्रुणुयाम देवाः।
भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्रा।।

(ऋग्वेद 1/9/8)

अर्थात् मैं कल्याणकारी सुनूँ और कल्याणकारी देखूँ। इसमें स्वतः ही इस प्रकार के पर्यावरण का भाव निहित है जिसमें ध्वनि प्रदूषण न हो तथा दृष्टि के समक्ष कूड़े कचरे के ढ़ेर तथा अवांछित घृणास्पद वस्तुयें न आयें।

आज प्राकृतिक दैवीय तत्त्व जल, अग्नि, भूमि, वायु, आकाश सभी मानवीय अज्ञान जनित स्वार्थ कर्मों से प्रकुपित होकर अकल्याणकारी हो गये हैं, प्रदूषण की इस अवस्था में जीव जगत् के सामान्य जीवन में बाधायें आकार वह रोगों का शिकार होता जा रहा है ऐसी अवस्था में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता का वृहत्तर दायित्व हमारी शिक्षण संस्थाओं पर आता है क्योंकि प्राथमिक कक्षाओं से ही बालक को इसकी उत्तम शिक्षा तथा विधि सिखाकर उसको उच्च कक्षाओं तक पूर्णरूपेण पर्यावरण के प्रति जागरूक व कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनाया जा सकता है। हमें प्रारम्भिक स्तर से ही बालकों में प्रकृति के दैवीय स्वरूप की भारतीय मान्यताओं से परिचित करवाकर उनमें सम्मान की भावना विकसित करनी है तथा तद्नुसार विद्यार्थियों को सुशिक्षित कर उनके आचरण को पर्यावरण संरक्षण के प्रति सकारात्मक बनाना है। जिससे वह भूमि को मातृवत् मानकर इसके पर्यावरण को स्वच्छ बनाये। मानव को सुखी बनाने हेतु अनेक संख्या में कल-कारखानें चल रहे हैं वे अपना प्रदूषित कचरा जल में, नदियों में बहा देते हैं तथा अपनी धुआँ से वायु को प्रदूषित करते हैं। अतः मानव केवल वर्तमान की अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए आने वाली पीढ़ियों हेतु पृथ्वी को नरक न बनाये और अपनी आवश्यकताओं को सीमित करे यह संस्कार देने का दायित्व भी शिक्षा का ही है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई से जहाँ शुद्ध हवा प्राप्त नहीं हो रही है वहीं वृक्षों की कमी वर्षा को भी प्रभावित करती है अतः शिक्षा संस्थानों द्वारा छात्रों से वृक्षारोपण तथा उनकी सुरक्षा कार्य पर्यावरण संरक्षण हेतु उचित कदम है।

विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में अपने स्तरानुसार प्रकृति के लिये भारतीय दृष्टिकोण एवं परम्पराओं के ज्ञान के लिये वेदों-उपनिषदों, पुराणों, इतिहास ग्रन्थों तथा सन्त साहित्य के उत्तम वचनों की व्यावहारिक शिक्षा देने का प्रबन्ध होना चाहिये। हमारे यहाँ का जीवन दर्शन असीमित भोग की अनुमति नहीं देता उसमें परोपकार की भावना निहित है जिसमें पर्यावरण संरक्षण व प्रकृति को बचाने का भाव निहित है जैसा कि इशोपनिषद् में लिखा है-

ईशावस्यमिदं सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत्
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यास्विद्धनम्।

(इशोपनिषद्)

अर्थात् यह चराचर जगत् ईश्वर के अंश से व्याप्त है अतः इसमें दूसरों को देकर भोग करने की भावना होनी चाहिये तथा यह जो प्राकृतिक सम्पदा है, वह अगली पीढ़ियों के लिये भी है, उसमें आपकी लालच की प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिये। इस प्रकार के उदात्त संस्कार शिक्षा ही विकसित कर सकती है। निश्चित रूप से पर्यावरण का भारतीय दृष्टिकोण ईश्वरीय तत्त्वों की उपासना करते हुए मनुष्य को नीरोग, पूर्ण क्षमतावान सौ वर्ष तक जीवन धारण के लिये आश्वस्त करता था -

पश्येम शरदःशतं जीवेम
शरदः शतं श्रुणुयाम शरदः शतं
प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः
स्याम शरदः शतं भूयश्च।

अर्थात् हम सौ वर्ष तक देखें, सौ वर्ष तक जीवें, सौ वर्ष तक सुनें, सौ वर्ष तक कहें, सौ वर्ष तक हम अदीन बने रहें। इस प्रकार की ऋषि की प्रार्थना के फलित होने का उपाय भारतीय दृष्टिकोण से प्रकृति के दैवीय तत्त्वों की आराधना ही है। वैदिक ऋषि का यह संकल्प शिक्षा ही पूर्ण कर सकती है, अतः हमारी शिक्षा द्वारा प्रकृति के लिये भारतीय दृष्टि विद्यार्थियों के आचरण में ग्राह्य करवानी चाहिये यही वैश्विक पर्यावरण संरक्षण एवं संतुलन की उन्नत एवं कल्याणकारी दृष्टि है। ❑

(सह-आचार्य, संस्कृत विभाग, राज. बा.ना. स्नातकोत्तर महा.चिमनपुरा, शाहपुरा, जयपुर)

देश का आर्थिक भविष्य काफी हद तक हमारी युवा आबादी और जननांकीय लाभांश पर निर्भर करता है। देश के पाँच वर्ष से कम उम्र के बच्चों में करीब 38 प्रतिशत शारीरिक और संज्ञानात्मक रूप से कमतर हैं। ऐसे में साफ-सफाई की कमी एक अहम मुद्दा है। इस बात का जोखिम है कि भविष्य में शायद हमारी काम करने वाली आबादी का बड़ा हिस्सा अपनी पूरी उत्पादकता का इस्तेमाल न कर पाए। इससे अर्थव्यवस्था को गंभीर जोखिम उत्पन्न होगा। स्वच्छ भारत अभियान के चलते बदलाव आ रहा है।

शौचालय व स्वच्छता का अर्थशास्त्र

❑ परमेश्वरन अय्यर

झारखंड का लातेहार जिला अब खुले में शौच से मुक्त हो चुका है। वहाँ के स्कूली शिक्षकों को कुछ रोचक चीजें देखने को मिल रही हैं। उनका कहना है कि स्वच्छ भारत अभियान के चलते बच्चों में डायरिया, उल्टी और मलेरिया की शिकायतें कम हुई हैं। स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की तादाद भी कम हुई है और उपस्थिति बेहतर हुई है। उनका मानना है कि बच्चे नियमित स्कूल आने के कारण पढ़ाई में भी बेहतर हो रहे हैं। छत्तीसगढ़ के नारायणपुर जिले के चिकित्सकों का कहना है कि वहाँ पेट की बीमारियों की शिकायत लेकर आने वाली महिलाओं की तादाद में कमी आई है। महिलाओं को अब अपने इलाज पर बहुत कम व्यय करना पड़ रहा है और उनके पास उत्पादक कार्य करने के लिए समय भी अधिक है। इसके चलते वे अतिरिक्त कमाई कर पा रही हैं। इतना ही नहीं वे अपने बच्चों की स्कूली गतिविधियों में भी बेहतर योगदान कर पा रही हैं।

बिहार के किशनगंज जिले में स्थित हलमाला ग्राम पंचायत के शिब्बुलाल दास और राजो देवी का कहना है कि वे अपने वार्ड के पुराने खुले में शौच वाले स्थान के करीब रहा करते थे। तब उनका औसत मासिक पारिवरिक चिकित्सा बिल करीब 3,500 रुपये आया करता था। इसमें दवाई और चिकित्सक का शुल्क आदि सभी शामिल हैं। बीते करीब चार महीने से पंचायत खुले में शौच मुक्त है और उनका दावा है कि वे चार महीने में केवल दो बार चिकित्सक के पास गए हैं। जबकि पहले उन्हें एक महीने में चार से पाँच बार चिकित्सक के पास जाना पड़ता था। क्या ये सारी बातें और ये सारे लाभ प्रमाणों पर आधारित हैं?

इन सवालों के जवाब तलाशने के लिए और खुले में शौच मुक्त गाँवों के परिवारों को मिलने वाले आर्थिक लाभ का आकलन करने के लिए यूनिसेफ ने हाल ही में करीब 12 राज्यों के 18,000 लोगों पर एक अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि ये लाभ न केवल उल्लेखनीय हैं बल्कि वे स्पष्ट नजर भी आ रहे हैं। अध्ययन में अनुमान जताया गया कि एक खुले में शौच मुक्त परिवार हर साल चिकित्सा के खर्च में करीब 50,000 रुपये की बचत करता है। इसके अलावा उसका समय भी बचता है और लोगों की जान भी। इसके अलावा उन्होंने अनुमान लगाया कि प्रति परिवार संपत्ति मूल्य में करीब 19,000 रुपये का इजाफा

हुआ। अध्ययन में यह भी कहा गया कि सफाई के कारण हर परिवार को होने वाला आर्थिक लाभ 10 वर्ष की अवधि में होने वाले समेकित निवेश से 4.3 गुना अधिक रहेगा।

इन निष्कर्षों को वैश्विक आलोक में भी देख सकते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के मुताबिक सफाई पर होने वाले व्यय पर वैश्विक आर्थिक प्रतिफल प्रति डॉलर निवेश पर करीब 5.5 डॉलर है। जबकि अन्य अनुमानों के मुताबिक यह और अधिक हो सकता है। यूएन वाटर के अनुमान के मुताबिक साफ-सफाई में बेहतरी से हर घर को साल में काम करने, अध्ययन करने, बच्चों की देखभाल करने आदि के 1,000 अतिरिक्त घंटे मिलते हैं। यानी हर परिवार को हर साल आठ घंटे के काम के 125 दिन अतिरिक्त मिलते हैं। भारतीय संदर्भ में देखा जाए तो खुले में शौच मुक्त भारत को हर साल काम के 10 अरब अतिरिक्त दिन मिल सकते हैं।

इन अध्ययनों की ही पुष्टि करते हुए विश्व बैंक अनुमान जताता है कि अपर्याप्त सफाई के कारण हर साल करीब 260 अरब डॉलर का नुकसान होता है। इससे विभिन्न देशों को जीडीपी के 0.5 प्रतिशत से लेकर 7.2 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। वर्ष 2006 में भारत को स्वास्थ्य, पानी, अन्य सेवाओं में कमी आदि के चलते 53.8 अरब रुपये का नुकसान हुआ था। यह देश के कुल जीडीपी का 6.4 प्रतिशत था।

देश का आर्थिक भविष्य काफी हद तक हमारी युवा आबादी और जननांकीय लाभांश पर निर्भर करता है। देश के पाँच वर्ष से कम उम्र के बच्चों में करीब 38 प्रतिशत शारीरिक और संज्ञानात्मक रूप से कमतर हैं। ऐसे में साफ-सफाई की कमी एक अहम मुद्दा है। इस बात का जोखिम है कि भविष्य में शायद हमारी काम करने वाली आबादी का बड़ा हिस्सा अपनी पूरी उत्पादकता का इस्तेमाल न कर पाए। इससे अर्थव्यवस्था को गंभीर जोखिम उत्पन्न होगा। स्वच्छ भारत अभियान के चलते बदलाव आ रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों की साफ-सफाई का स्तर बदला है और यह अक्टूबर 2014 के 39 प्रतिशत से सुधरकर आज 84 प्रतिशत पर पहुँच चुका है। 360,000 से अधिक गाँवों को खुले में शौच से मुक्त घोषित किया जा चुका है।

देश में सफाई उद्योग करीब 32 अरब डॉलर का है। सन 2021 तक यह बढ़कर 62 अरब डॉलर हो जाएगा। इस दौरान इस क्षेत्र में रोजगार के कई प्रत्यक्ष अवसर भी सामने आ रहे हैं। झारखंड के सिमडेगा जिले में महिलाएँ मिस्त्री का काम कर रही हैं और उन्हें राज मिस्त्री की तर्ज पर रानी मिस्त्री का नाम दिया गया है। झारखंड में अब करीब 50,000 ऐसी महिलाएँ काम कर रही हैं जो रोज 300-400 रुपये कमा रही हैं। वहीं हर शौचालय के निर्माण से उन्हें 1,800 से 2,400 रुपये की अतिरिक्त आय होती है। बीते साढ़े तीन साल में देश भर में करीब 7 करोड़ शौचालय बने हैं। अनुमान लगाया जा सकता है कि इससे करीब 1.68 अरब काम के घंटों की बचत हुई है।

हाल ही में महाराष्ट्र के खेड़ जिले के कृषि वैज्ञानिकों ने पाया कि शौच से बनी खाद ने प्याज की बेहतर उपज देने में मदद की। यह उपज जैविक खाद और रासायनिक खाद दोनों से बेहतर रही। सरकार स्वच्छ भारत मिशन के तहत दो पिट वाले शौचालयों को प्रोत्साहित किया जो स्वतः खाद तैयार करने में मदद करते हैं। इससे एक नए उद्योग की संभावना मजबूत हुई है। महाराष्ट्र के अधिकारियों का अनुमान है कि हर साल इस तरह करीब 1,400 टन खाद तैयार की जा सकती है। दुनिया भर में यह बात स्वीकार्य है कि अच्छी साफ-सफाई का सामुदायिक स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव होता है। अब साफ है कि इसका अर्थव्यवस्था पर भी सकारात्मक असर हो रहा है। स्वच्छ भारत मिशन के जरिये सफाई अब राष्ट्रीय विकास के एजेंडे में प्रमुख हो गई है। इसके स्वास्थ्य संबंधी लाभ तो हैं ही, स्थिर आर्थिक बचत भी हो रही है। आज शौचालय न केवल चिकित्सक बल्कि बैंक, उर्वरक, रोजगार प्रदाता और विकास एवं निवेश के प्रतीक भी बनते जा रहे हैं। ❑

(सचिव, पेयजल व स्वच्छता मंत्रालय, भारत सरकार)

One must protect and preserve environment for sustenance and existence. But, many societies all over the globe, who were not under the influence of Semitic theology in their originality, had their own ways of looking at the environment and respecting the environment. With the great sea voyages of Europeans in seventeenth century, most of such societies got into Semitic traditions, either through Christianity or Islam. Bharat ever had well spelt out theories and practices towards protection and maintenance of environment.

Education and Environment

❑ Dr. TS Girishkumar

One of the important aspects that ought to be given primacy in any kind of education is a strong awareness of the environment, for the simple but precise logic that let us know where we exist: let us know who and what we are: let us know how we are inter-related to things other than what we are in our surroundings: above all, let us know how all these things are inter-connected, failing which would bring great disasters.

What is environment?

The normal definition of environment is that 'Environment is everything round us, both living and non-living beings. It shall include, physical, chemical and all other natural forces. Living things live in their environment, and they constantly interact with one another'. The living being's continuous interaction with the surroundings must be in and through some implicit harmony that may not be elaborately spelt out but shall definitely be understood. Should the harmony be hampered, the beings within the given environment shall suffer, or worse, the very environment shall suffer. Suffering of living beings could lead to their very extinction but suffering of environment shall lead to greater disasters to the whole phenomenon of existence itself.

Europeans and Environment in the past

How to understand and treat the environment comes from tradition to begin with. For Europe today, their tradition is embedded with the Christian religion, and teachings therein. The Christian theology and the Semitic theology itself, speaks about a creator God, with his instructions to mankind. The theology is that God created everything in six days and his final creation is in his own personal image, which is man. This makes man important, as the main creation of God. Then God created the special place for man to live, the Paradise. Further, God tells him that whatever he has created, is all for the use of man.

And man, thus became some kind of authority over everything, as man is

God's chosen creation. Man becomes some kind of master, so he could make everything work for him, his choice. From such a theology, what could be the impact on environment? European society thought that everything was meant for them, and they started "abusing" the nature, and the whole environment for their whims and fancies. Eventually, they became the greatest destroyers of nature and environment. Forests were destroyed, mountains were erased, and forests became deserts, rivers dried up, both flora and fauna got destroyed. These same practices were adopted in whichever societies they had gone into as conquerors: they behaved as masters not only to nature, but also to those whom they colonised through conquests. They adopted many methods to conquer, military power, political strategies, as well as their religion, in pretext of "civilising" the "barbarians": all, other than those from Semitic tradition are called "pageants" by Christian theologians, and what is more, they really believed that they are superior to everyone else.

Eventually, when their callous activities started making serious disasters to the environment, they began realising the importance of environment and environmental protection. From then on, we find the Europeans clamouring for environment, environmental protection and such things. The environmental consciousness and theories of Europe are only a reaction to the environmental problems created by themselves; but now they wish everyone to follow their steps, for all their mistakes. Indeed, one must protect and preserve environment for sustenance and existence. But, many societies all over the globe, who were not under the influence of Semitic theology in their originality, had their own ways of looking at the environment and respecting the environment. With

the great sea voyages of Europeans in the seventeenth century, most of such societies got into Semitic traditions, either through Christianity or Islam. Bharat ever had well spelt out theories and practices towards protection and maintenance of environment.

Environment in the Vedas

For Bharat, all knowledge originates from the Vedopanishadic knowledge tradition. Let us see how the Vedas look at the questions of environment, which are repeated and retold through the Upanishads, Shastras, Smritis, Puranas and so on. The consciousness towards environment is spread through everything through Hindu Dharma for ages, and such things are into the integral existence of Hindus. While looking for instructions towards environment in the Vedopanishadic knowledge tradition, it is possible for us to hit upon nine cardinal points.

Panchamahabhutas – The five great elements create a nexus of nature and life, which is seen in the inter connectedness of the cosmos and the human body. The five great elements space air fire water and earth are derived from the primeval energy, prakriti. Each of these elements are original and distinct, they are interconnected as well as independent. When it comes to the Upanishads, the whole thing gets connected to the ultimate reality, Brahman.

Isavasyam

Everything is divine. There is an Upanishad itself in that name:

which becomes the principal consciousness towards environment. The Bhagavad Gita reiterates this, (7, 19, 13) and the Bhagavatapurana makes this further explicit (2.2.41 & 2. 2. 45).

It is Dharma to protect environment. Harming environment becomes Adharma. Since it is Isavasyamidamsarvam, it is simply the Dharma to respect every part of the cosmos and disrespecting becomes wrong.

Environmental actions are leading to Karma and shall affect our karma. Since there is also a concept of karmaphala, for wrong karma, one may have to suffer.

Bhumi is Devi – Mother to all. Bhumi must be respected and worshipped. Respecting mother earth is a common Hindu practice.

The Yogic and Tantric traditions treat material reality as sacred. This is because the entire universe is manifestation of the divine, the ultimately real.

Belief in rebirth is another source of respecting environment. We believe in cycles of birth, and are not sure of anything exclusively as human. Any object could have been human in previous birth. Naturally, this calls for respecting everything.

Ahimsa Paramo Dharma. Since ahimsa, not harming anything is a great Dharma, it becomes spontaneous for Hindus not to harm nature, and thereby environment.

Sanyasa. The Upanishadic teaching, "Ten Tyaktena Bhunjita", teaches one the seriousness of the concept of Tyaga. Whatever one may take or adopt for himself in person should have the strongly built in concept of tyaga, for nothing belongs to any person, the person itself belongs to the cosmos and respecting everything automatically becomes Dharma.

Let us also look at the Upanishadic shanti mantra that aspires shanti to all aspect of the nature as well as the cosmos. It says:

Dyauhshantiir-antariksham shanti- prithvishantir-apashantir-oushadaya shanti, vanaspataya shantir-visve Devahshantir-Bharhmashantih, sarvamshantihi, shantireva-shantihi, sa ma shantir-edhi.

This mantra offers respect to directions, atmosphere, earth – waters – medicinal plants – flora and fauna – all world gods – to the ultimately real –to everything – shanti to shanti itself – and also to this aspirant for shanti.

Education and environment

We, the people of Bharat, we, the Hindus are immensely fortunate. We have everything foretold to us by our Rishis, and Acharyas. They are all well written down and given to us. We only have to do just one thing: incorporate them in our curriculum. Teach such things to our future generations. There shall be oppositions, there shall be accusations, there shall be character assassinations. But we should go formidable, for a better Bharat, as well as a better world.❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में नया चिंतन

सरकारी विद्यालयों के छात्रों को अत्याधुनिक सुविधाएँ प्रदान करने के लिये भारत सरकार के मानव संसाधन मंत्रालय ने शाला सारथी योजना प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत कारपोरेट घरानों एवं स्वयंसेवी संगठनों से राशि उगाहने एवं अन्य कार्यों के माध्यम से कुछेक विद्यालयों का स्तर सुधारने का कार्य किया जायेगा। उदाहरणार्थ, इन विशेषाधिकृत विद्यालयों को स्मार्ट क्लासरूम, सीसीटीवी कैमरे, खेल उपकरण, कम्प्यूटर, अच्छी प्रयोगशालायें, पुस्तकालय आदि मिल सकेंगे। योजना प्रशंसनीय है यद्यपि इसके कारण सरकारी विद्यालय भी दो प्रकार के हो जायेंगे। स्पष्ट है कि शिक्षा के स्तर की एकरूपता बलि चढ़ जायेगी और यह निश्चित रूप से सामाजिक न्याय नहीं होगा।

❑ **डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल**

'**प्र**थम' द्वारा प्रत्येक वर्ष प्रस्तुत की जाने वाली ASER (Annul Status of Education Report) की श्रेणी में वर्ष 2017-18 की रपट में एक बार पुन: भारत में प्रारंभिक शिक्षा की दयनीय अवस्था उजागर हुई है। 14-18 वर्ष की आयु वर्ग के विद्यार्थियों में 14 प्रतिशत को इस बात का भी ज्ञान नहीं था कि भारत की राजधानी का नाम क्या है, 21 प्रतिशत को अपने राज्य का नाम ज्ञात नहीं था, 75 प्रतिशत अपनी मातृभाषा में छपा लेख त्वरित गति से पढ़ नहीं पाये तथा 57 प्रतिशत सामान्य-सा तीन अंक का गुणा भाग नहीं कर पाये। यद्यपि 53 प्रतिशत को अंगेजी में औसत दक्षता प्राप्त थी।

रपट से अलग भी कुछ तथ्य चिंता उत्पन्न करते हैं। विद्यार्थियों में संस्कारहीनता बहुत अधिक बढ़ गई है। नकल पर उनकी असीमित निर्भरता, अभिभावकों एवं शिक्षकों के प्रति बढ़ता अवज्ञा का भाव तथा आपराधिक प्रवृत्तियों का जागरण इसी का परिणाम है। कमरतोड़ पाठ्यक्रम एवं परीक्षाओं की अधिकता के कारण उत्पन्न नितान्त समयाभाव के चलते वे खेल-कूद से दूर होते जा रहे हैं तथा पाठ्यपुस्तकों से इतर साहित्य का उनके जीवन में कोई भी स्थान बन ही नहीं पाता (इसमें उनके मोबाईल, लैपटॉप आदि का भी समुचित योगदान रहता है)। इसका निश्चित प्रभाव उनके स्वास्थ्य तथा सामान्य ज्ञान पर पड़ता है। ये ही कारक उनमें मौलिक चिंतन न पनपने देने के लिये भी उत्तरदायी होते हैं। स्पष्ट है कि इस पौध से बनने वाले नागरिक भी अधिकांशतया संस्कारहीन, कर्तव्य-पथ से दूर तथा मशीनी प्रकृति के होते जा रहे हैं।

एक अन्य प्रवृत्ति भी प्रारंभिक शिक्षा की शोचनीय अवस्था को प्रकट करती है और वह है विद्यार्थियों द्वारा शीघ्र ही विद्यालय छोड़ देने की (ड्रॉप आउट)। भारत के मानव संसाधन विकास मंत्री प्रकाश जावड़ेकर ने लोकसभा में स्वीकार किया कि कक्षा 9-11 में ड्रॉप आउट दर 17 प्रतिशत तक हो चुकी है। हरियाणा को यदि उदाहरण के रूप में लें तो वहाँ पिछले वर्ष (2016-17) में प्रारंभिक विद्यालयों में लगभग एक लाख विद्यार्थियों

ने पूर्व वर्षों की अपेक्षा या तो विद्यालय में प्रवेश लेना ही उचित नहीं समझा अथवा छोड़ कर चले गये (दैनिक भास्कर 7.05.2018)। विद्यार्थियों एवं अभिभावकों में शिक्षा के प्रति बढ़ती अरुचि के ही कारण देश के 10.53 लाख सरकारी प्रारंभिक विद्यालयों में से 3.72 लाख में पचास से भी कम विद्यार्थी हैं (टाइम्स ऑफ इंडिया, दिल्ली संस्करण 26.08.2016)। इस अरुचि के अनेक कारण हो सकते हैं परंतु विद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति के संबंध में सरकारों की उदासीनता अवश्य ही सबसे बड़ा कारण है। उदाहरणार्थ, हरियाणा में अंग्रेजी, गणित आदि के शिक्षकों के पचास हजार पद खाली पड़े हैं (दैनिक भास्कर, 07.05.2018)

प्रसन्नता की बात है कि सरकारें अब ऊपर उठाये गये बिंदुओं को समझने लगी हैं और इनका हल प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही हैं। दूसरे शब्दों में, प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में नया चिंतन आरंभ हो गया है।

25 वर्षों के लंबे अंतराल के पश्चात् भारत सरकार नई शिक्षा नीति तैयार करने में जुटी है और आगामी दो माह में वह जनता के समक्ष आ सकती है। श्री प्रकाश जावड़ेकर के अनुसार इसके मुख्य बिंदु होंगे - सभी को सस्ती, गुणवत्तापरक एवं रोजगारपरक शिक्षा। नीति में सामाजिक न्याय पर भी बल दिया जायेगा तथा शिक्षा की जिम्मेदारी सुनिश्चित की जायेगी। ऐसी नीति देश के हर क्षेत्र एवं वर्ग में अवश्य ही उत्साह का संचार करेगी।

कुछ समय पूर्व उन्होंने इस बात पर भी आश्चर्य प्रकट किया कि विद्यालयों का पाठ्यक्रम इतना भारी है कि वह बी.ए. तथा बी.कॉम से भी अधिक ठहरता है। विद्यार्थियों के इस कमरतोड़ बोझ को कम करने के लिये N.C.E.R.T. को निर्देश दे दिये गए हैं और नये हल्के पाठ्यक्रम वर्ष 2019 से लागू कर दिये जायेंगे। स्पष्ट है कि बच्चों के बस्तों का भार हल्का हो सकेगा। बिना परीक्षा के प्रोन्नति देने की परम्परा समाप्त की जा रही है ताकि पढ़ने में विद्यार्थी अधिक गंभीर बनें तथा उनमें प्रतियोगिता की भावना जाग्रत हो। इसके साथ ही हरियाणा जैसे अनेक राज्य मासिक टेस्टों की परम्परा छोड़कर पहले की भांति त्रैमासिक परीक्षाएँ पुनः प्रारंभ करने जा रहे हैं। इससे भी विद्यार्थियों को खेल कूद के लिये समय मिलेगा, पाठ्यक्रम के बाहर की भी पुस्तकें पढ़ने में रुचि जाग्रत होगी तथा मौलिकता पनपेगी।

सरकारी विद्यालयों के छात्रों को अत्याधुनिक सुविधाएँ प्रदान करने के लिये भारत सरकार के मानव संसाधन मंत्रालय ने शाला सारथी योजना प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत कारपोरेट घरानों एवं स्वयंसेवी संगठनों से राशि उगाहने एवं अन्य कार्यों के माध्यम से कुछेक विद्यालयों का स्तर सुधारने का कार्य किया जायेगा। उदाहरणार्थ, इन विशेषाधिकृत विद्यालयों को स्मार्ट क्लासरूम, सीसीटीवी कैमरे, खेल उपकरण, कम्प्यूटर, अच्छी प्रयोगशालायें, पुस्तकालय आदि मिल सकेंगे। योजना प्रशंसनीय है, यद्यपि इसके कारण सरकारी विद्यालय भी दो प्रकार के हो जायेंगे। स्पष्ट है कि शिक्षा के स्तर की एकरूपता बलि चढ़ जायेगी और यह निश्चित रूप से सामाजिक न्याय नहीं होगा।

हरियाणा सरकार का एक अन्य निर्णय भी विद्यार्थियों को संस्कारशील बनाने में सहायक होगा और इस दृष्टि से वह स्तुत्य है। बढ़ती संस्कारहीनता को रोकने के लिये हरियाणा सरकार की इस अद्वितीय योजना को अवश्य ही केंद्र सरकार तथा अन्य राज्यों को भी अपना लेना चाहिये। इसके अंतर्गत प्राइमरी एवं मिडिल स्कूलों में अब समाज के दादा-दादी, नाना-नानी वर्ग के अनुभवी नागरिकों को आमंत्रित किया जायेगा ताकि निर्धारित समय में वे बच्चों को प्रेरक कहानियाँ सुना सकें। ये कहानियाँ, लोक प्रचलित आख्यानों, महापुरुषों के जीवन की अनुकरणीय घटनाओं एवं सामाजिक संस्कृति से संबंधित होंगी। मान लीजिये कि बच्चों को एकलव्य, श्रवणकुमार, अभिमन्यु, कर्ण आदि की गुरु निष्ठा, माता-पिता के प्रति कर्तव्यपूर्ण समर्पण, अनुकरणीय मित्रता आदि की कहानियाँ सुनाई जाती हैं तो निश्चित रूप से बालमन पर उनका अपेक्षित प्रभाव होगा। पंचतंत्र की नीति कथाएँ भी इसी प्रकार से उपयोगी रहेंगी। आधुनिकता की दौड़ तथा बच्चों को शीघ्रातिशीघ्र विषयों के गहन शिक्षण देने की होड़ में इन्हें बहुत पहले भुला दिया गया था और उसी के परिणामस्वरूप आज हम समाज में संस्कारहीनता और घोर अव्यवस्था देख रहे हैं। योजना अवश्य ही स्वागतयोग्य है और समयानुकूल भी।

एक विदेशी भाषा अंग्रेजी के पठन-पाठन पर अत्यधिक बल के कारण ड्राप आउट दर तो बढ़ ही चुकी है, मौलिकता के प्रस्फुटन में भी गंभीर बाधाएँ उत्पन्न हो रही हैं। अभी कुछ ही दिन पूर्व साहित्य अकादमी के अध्यक्ष श्री चंद्रशेखर कंबारा ने कहा कि इसके कारण भारतीय भाषाओं को जबरदस्त धक्का पहुँच रहा है तथा भावी लेखकों में सर्जनात्मकता का ह्रास हो रहा है। हमें अंग्रेजी के व्यामोह से निकलना ही होगा। इस संबंध में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा द्वारा नागपुर में मार्च 2018 में पारित भाषा संबंधी प्रस्ताव भी दृष्टव्य है जिसमें प्राथमिक शिक्षा का माध्यम केवल मातृभाषा को बनाने का आग्रह है। इसके आगे भी देसी भाषाओं का प्रभावी विकल्प देने की वकालत की गई है। यह प्रस्ताव देश के शिक्षाविदों के लिये मार्गदर्शक सिद्ध होगा।

सब मिलाकर कहा जा सकता है कि प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में नया चिंतन प्रवाह प्रारंभ हो चुका है। भविष्य में शिक्षा की दशा में सुधार हो सकेगा और वह संस्कारशील, कर्तव्यपरायण, सक्षम नागरिकों के निर्माण में निस्संदेह सहायक होगी। ❑

(पूर्व सदस्य-केंद्रीय हिन्दी समिति, भारत सरकार)

प्राथमिक शिक्षा (कक्षा 5वीं तक) सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली की नींव होती है, ये ही बच्चे देश के भविष्य का निर्माण करते हैं। प्रारम्भिक शिक्षण अवस्था में बच्चे सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं, इस समय उनमें अधिक से अधिक ज्ञान ग्रहण करने की क्षमता होती है। प्रारम्भिक शिक्षा में विद्यार्थी परिवार और समाज में अपनी पहचान स्थापित करना शुरू करता है, इस स्थिति में कॅरियर की चिन्ता की अपेक्षा उसे अपने परिवार, समाज और आस-पास के वातावरण को देखने समझने का अवसर देने की आवश्यकता होती है। जिससे वह अपने दायित्वों का निर्धारण कर सके। नये विचारों के विकल्प सामने आएँगे, विद्यार्थी की जिज्ञासा बढ़ाने, प्रश्न पूछने, समाधान देने के लिये शिक्षक उन्हें प्रोत्साहित करें, उन्हें रोकने से उनमें नया करने का हौसला व सृजनशीलता समाप्त हो जाती है।

समग्र शिक्षा नीति की ओर बढ़ते कदम

❑ **डॉ. रेखा भट्ट**

आजादी के 70 वर्षों से भारत में स्थायी शिक्षानीति का निर्धारण नहीं हो सका है क्योंकि अनेक विसंगतियों एवं विरोधाभासों के चलते कुछ नीतियाँ देश के सभी शिक्षण संस्थानों में समान रूप से लागू नहीं हो पाती हैं। शिक्षा का श्रेणीगत (निजी व सरकारी) विभाजन शिक्षा के स्तर को उच्च और निम्न स्तर में बाँट देता है, भाषागत विभाजन सांस्कृतिक विभेद पैदा करता है, वहीं जातिगत विभाजन राजनीतिक स्तर पर सामाजिक वर्गीकरण कर देता है। इस तरह शिक्षा के मूल उद्देश्यों की क्रियान्विति से प्रबन्धन और प्रशासन दोनों भटक जाते हैं।

सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा शिक्षा नीति तय करने के लिये जो समिति तय की जाती है, उसमें भी राजनीतिक व जातिगत समीकरण, आर्थिक लाभ के लिये कॉरपोरेट सेक्टर व निजी प्रक्रमों की दखलंदाजी, समुदाय विशेष को प्राथमिकता, दक्षिण भारत का भाषायी संकट जैसे कई प्रकार के विभेद प्रकट होते हैं। निर्धारित समिति में आईएएस, सांइटिस्ट, वाइस चांसलर, काउसिंल के अध्यक्ष और भूतपूर्व सदस्य होते हैं, जो वर्तमान में शिक्षा से किसी प्रकार जुड़े नहीं होते और शिक्षा की बुनियादी समस्याओं एवं आवश्यकताओं से पूर्णतया अनभिज्ञ होते हैं। शिक्षा नीति में विद्यार्थी और शिक्षक से लेकर प्रबन्धक और प्रशासन तक किसी प्रकार का तालमेल स्थापित नहीं हो पाता। ये सदस्य अत्यन्त उच्च श्रेणी का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा समाज के हित की अपेक्षा अपने व्यक्तिगत स्वार्थों और निजी प्रतिष्ठा को प्रभावी बनाने के लिये प्रयत्नशील रहते हैं।

प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर विद्यार्थी की आवश्यकताएँ और शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्यों में बहुत अन्तर होता है। किन्तु मूल रूप से शिक्षा के सभी स्तरों पर वर्षों से ढोयी जा रही मैकॉले पद्धति को जड़-मूल से नष्ट करने की जरूरत है, इसलिये समुचित शिक्षा नीति में सुधार भारत के सुदृढ़ भविष्य के लिये निर्णायक सिद्ध होंगे। मैकॉलयी पद्धति के अनुसार अंकों के आधार पर मूल्यांकन के स्थान पर डिग्री में विद्यार्थी की उपलब्धियों, प्रतिभा और योग्यता का मूल्यांकन प्रदर्शित किया जाये तो वह डिग्री विद्यार्थी को सीधे रोजगार प्राप्ति से जोड़ेगी।

अंक प्रणाली समाप्त करने से कई सामाजिक समस्याएँ जो शिक्षा को विकृत करती जा रही हैं, वे स्वत: समाप्त हो जाएँगी। पहली- प्रश्न पत्र लीक होने जैसी समस्या जो पहले कभी-कभार आती थी, तकनीकी साधनों के विकसित होने के साथ सभी प्रतियोगी एवं डिग्री परीक्षाओं में यह समस्या बढ़ती जा रही है। सबसे विश्वसनीय माने जाने वाले सीबीएसई बोर्ड की 12वीं के प्रश्नपत्र लीक होने की घटना को मानव संसाधन

मंत्रालय द्वारा गंभीरता से लिया जाना चाहिये। दूसरी बड़ी समस्या है सामूहिक नकल। नकल के लिये ब्लू टूथ आदि गैजेट्स का उपयोग धड़ल्ले से किया जा रहा है। बिहार में विद्यालय की खिड़कियों से नकल कराते हुए दृश्य अब सभी जगह आम होते जा रहे हैं। तीसरी समस्या है, फर्जी डिग्रियों का कारोबार। विद्यार्थियों द्वारा प्रतियोगी परीक्षाओं में पात्रता प्राप्त करने के लिये बड़ी कीमत चुका कर निजी विश्वविद्यालयों से नकली डिग्री प्राप्त कर लेता है। शिक्षक भर्ती परीक्षा में एक ही निजी विश्वविद्यालय के छात्रों को बहुतायत में पात्रता मिलने की जाँच की गई। पुष्टि होने से निजी क्षेत्र से प्राप्त डिग्रियों की मान्यता भी अब संदिग्ध मानी जाने लगी हैं। इसी तरह चौथी समस्या पास बुक्स माफिया की है। न्यूनतम अंक प्राप्त कर पास होने और स्नातक, स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त करने के लिये विद्यार्थी पाठ्यपुस्तकों के स्थान पर कई तरह की पास-बुक्स का प्रयोग करते हैं, क्योंकि डिग्री विद्यार्थी की प्रतियोगी परीक्षा में पात्रता तो सुनिश्चित करती है किन्तु उनके रोजगार को नहीं। पाँचवीं समस्या आरक्षण की है। भारतीय शिक्षण तंत्र-जीवन को ऊपर उठाने के उद्देश्य से दी जाने वाली शिक्षा मानवीय मूल्यों पर आधारित थी। आज इसी शिक्षा प्रणाली ने विद्यार्थी के जीवन का अन्तिम लक्ष्य अंक प्राप्ति बना दिया है। डिग्री में व्यक्तिगत योग्यता को मूल्यांकन का आधार बनाने से शिक्षण संस्थानों में अंकों के आधार पर दिये जाने वाले आरक्षण का औचित्य समाप्त हो जायेगा।

किसी भी परीक्षा परिणाम के लिये शिक्षण संस्थान विद्यार्थी की अपेक्षा शिक्षक की जवाबदेही सुनिश्चित करें तो शिक्षक की भूमिका अर्थपूर्ण बनेगी। शिक्षक द्वारा सार्थक शिक्षण दिया जाना ही शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाता है। शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शिक्षण सुचारू नहीं होने के भिन्न-भिन्न कारण सामने आये हैं। प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर शिक्षकों द्वारा कराये जाने वाले अतिरिक्त कार्य जैसे पोषाहार योजना, पल्स पोलियो ड्रॉप्स का वितरण, जनसंख्या गणना, मतदान आदि कार्य सौंपे जाना उन्हें मूल शिक्षण कार्य से विमुख करता है। उच्च माध्यमिक कक्षाओं में प्रतियोगी परीक्षाओं एवं नियमित पाठ्यक्रम के विस्तृत होने के कारण अतिरिक्त समय में ट्यूशन या कोचिंग देकर अपने निर्देशन में पूरा पाठ्यक्रम करवाते हैं। उच्च शिक्षा में शिक्षक को API (Academic Performance Indicator) स्कोर को पूरा करना होता है इसके लिये शोध छात्रों की संख्या, शोध पत्रों की संख्या, शोध पत्र पढ़ने व भाग लिये गये कॉन्फ्रेंस, सेमिनार की संख्या, प्रकाशित पुस्तकों की संख्या आदि मानदण्डों को पूरा करना होता हैं। अत: उच्च शिक्षा में शोध कार्य को प्राथमिकता से पूरा किया जाता है और शिक्षण कार्य उपेक्षित ही रहता है।

शिक्षकों को शिक्षण प्रशिक्षण देकर शासन द्वारा औपचारिकता पूर्ण कर ली जाती है। शिक्षण प्रशिक्षण पर बड़ी राशि व्यय की जाती है। पाठ्यक्रम में शिक्षक का दायित्व पूर्ण करने के लिये इस प्रकार निर्देशित किया जाये, कि वह कक्षा में नवाचार लाने का प्रयास करें, आधुनिक तकनीक के माध्यमों का उपयोग कर अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने का प्रयास करे, स्वयं नया जानने व विद्यार्थी की आवश्यकताओं के अनुसार प्राचीन देशी-विदेशी अवधारणाओं व अन्वेषण के आधार पर नये अन्वेषण करने के लिये प्रेरित करे। मॉडल, चार्ट, डिस्प्ले, आदि द्वारा शिक्षण को रुचिकर बनाये तथा विद्यार्थी को अपने साथ शिक्षण से जोड़ने का प्रयास करें।

प्रत्येक स्तर की शिक्षा के उद्देश्यों को प्रधानता देकर पाठ्यक्रम की विषय वस्तु तय करें। इस तरह से पाठ्यक्रमों पर आधारित पाठ्यपुस्तकें शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के लिये उपयोगी सिद्ध होंगी और कक्षा-कक्ष में पूर्ण मनोयोग से अध्ययन हो सकेगा।

कक्षा-कक्ष में क्रियात्मक प्रयोगात्मक एवं रचनात्मक तरीकों से ही शिक्षण प्रदान करने पर भी विद्यार्थी शिक्षण में भागीदार बनते हैं। वर्तमान स्थिति में विज्ञान जैसे प्रयोगधर्मी विषय भी प्रयोगाशाला, कार्यशाला व संसाधनों के अभाव में निष्क्रिय व नीरस बन गये हैं। शिक्षा नीति में, शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर विद्यार्थी की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षण पद्धति तय की जाये, तो उचित पाठ्यक्रम का निर्धारण हो सकेगा और पाठ्यपुस्तकें प्रासंगिक होंगी तथा शिक्षक द्वारा किया जाने वाला सार्थक शिक्षण जो विद्यार्थी की योग्यता और उसकी क्षमता बढ़ायेगा।

प्राथमिक शिक्षा (कक्षा 5वीं तक) सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली की नींव होती है, ये ही बच्चे देश के भविष्य का निर्माण करते हैं। प्रारम्भिक शिक्षण अवस्था में बच्चे सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं, इस समय उनमें अधिक से अधिक ज्ञान ग्रहण करने की क्षमता होती है। बच्चों के शारीरिक व मानसिक विकास की प्रक्रिया में स्वतंत्र, खुशनुमा, सकारात्मक वातावरण सहायक होता है। परीक्षा का उद्देश्य प्रतिस्पर्धा निर्मित कर बच्चों के लिये शिक्षा को तनावपूर्ण बनाता है और माता-पिता भी बच्चों पर अच्छे प्रदर्शन का दबाव बनाते हैं। प्रारम्भिक शिक्षा में विद्यार्थी परिवार और समाज में अपनी पहचान स्थापित करना शुरू करता है, इस स्थिति में कॅरियर की चिन्ता की अपेक्षा उसे अपने परिवार, समाज और आस-पास के वातावरण को देखने समझने का अवसर देने की आवश्यकता होती है। जिससे वह अपने दायित्वों का निर्धारण कर सके। प्रकृति के बीच रह कर पर्यावरण संरक्षण का महत्त्व जाने और आगे चलकर पर्यावरण संरक्षण के लिये प्रतिबद्ध रहे। कक्षा

से बाहर बच्चे अधिक सीखते हैं, अतः उनके लिये खेलकूद, भ्रमण, सांस्कृतिक व साहित्यिक गतिविधियों से शिक्षण को सक्रिय एवं गतिशील बनाया जा सकता है। सामूहिक रूप से खेल-खेल में शिक्षण करवाने से बच्चे की अभिव्यक्ति क्षमता और अभिरुचियाँ प्रकट होंगी। नियत पाठ्यपुस्तकों की अपेक्षा वे रंग-बिरंगे, कार्ड्स, कटआउट्स, स्केचेज, विडियो आदि की ओर अधिक आकर्षित होते हैं। प्राचीन गुरुकुल पद्धति के अनुरूप मुखाग्र वाचिक पद्धति द्वारा ज्ञान को कण्ठस्थ करना लाभदायक होता है, यह सभी विकसित देशों में भी अनुसंधान द्वारा सिद्ध किया जा चुका है। भारतीय संस्कृति से ओतप्रोत कविताएँ, गीत, प्रेरणास्पद कहानियाँ इतिहास के महापुरुषों की जीवनियों, ऐतिहासिक स्थलों, महान वैज्ञानिकों के अन्वेषण के बारे में जानने से उनके भावी जीवन को नैतिक व आध्यात्मिक आधार मिलेगा और भविष्य के लिये अनुसंधान की मनोवृत्ति बनेगी।

शिक्षण के अतिरिक्त पोषाहार आदि कार्यों के लिये शिक्षकों की अपेक्षा बेरोजगार युवाओं की वर्कफोर्स तैयार करने से उन्हें आर्थिक सहायता एवं सामाजिक कार्यों में संलग्न होने के अवसर मिलेंगे। प्राथमिक स्तर पर अंकों की परीक्षा प्रणाली समाप्त कर दी जाये किन्तु मूल्यांकन पद्धति को यथावत् रखा जाये जिसमें प्रत्येक वर्ष बच्चों द्वारा प्राप्त ज्ञान में वृद्धि का मूल्यांकन हो। बच्चों का भारत व दुनिया की संस्कृति, इतिहास, विज्ञान व साहित्य का ज्ञान बढ़े। उनके संस्कारों को परिष्कृत कर प्रभावशाली व्यक्तित्व का गठन हो। उनकी प्रतिभा और योग्यता के मूल्यांकन द्वारा उनकी भावी शिक्षा की दिशा तय की जा सके।

अभी तक चली आ रही अंकों पर आधारित परीक्षा प्रणाली के हटाये जाने से प्राथमिक शिक्षण में शिथिलता न आये, जिस तरह '8वीं तक पास करने के नियम' के कारण आई थी। मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा नई शिक्षा नीति में प्राथमिक स्तर पर प्रशासन द्वारा स्थानीय नियामक तंत्र बनाना होगा। यह तंत्र विद्यालय प्रबन्धक द्वारा अध्यापन की समुचित व्यवस्थाओं और नीति के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करें। विद्यार्थी व अभिभावकों के फीडबैक द्वारा शिक्षा के अनुकूल वातावरण बनाये जाने के लिये संस्था-प्रधानों को जवाबदेह बनाया जाये। उन्हें विशेष अधिकार प्रदान किये जायें जो बच्चों को प्रताड़ना व शोषण से बचा सकें। शिक्षकों को शिक्षण कार्य के प्रति समर्पित कर सकें। विद्यालय में बच्चों को सुरक्षित एवं विकसित होने का वातावरण देने की बच्चों को सरकारी स्कूलों में प्रवेश लेने पर भी उतना ही गर्व होगा जितना निजी में होता है और विद्या के मन्दिरों की विश्वसनीयता लौटेगी।

माध्यमिक शिक्षण काल (कक्षा 6 से 10वीं) विद्यार्थी की कला, साहित्य, कौशल आदि अभिरुचियों को भविष्य में विकसित करने का आधार होता है। अतः पाठ्यचर्या में कौशल, व्यवसाय, कलात्मक, रचनात्मक अभिरुचियों के विविध क्षेत्रों को समाहित किया जाना चाहिये। अभिरुचियों को विकसित करने के लिये उनसे जुड़ी प्रारम्भिक जानकारी, प्राचीन अवधारणाएँ, उपलब्धियाँ तथा इससे जुड़ी समस्याओं और भविष्य की संभावनाओं का सामूहिक शिक्षण दिया जा सकता है। डिजीटल एवं विडियो डिसप्ले, प्रयोगशालाओं में तथा कार्यशालाओं में प्रशिक्षण और संगोष्ठी, सेमिनारों में प्रतिभागिता द्वारा कार्य की विवेचना करने से सोचने विचारने और करने से कार्य की विधि विकसित होगी और विद्यार्थी के कार्य करने का अनुभव बढ़ेगा। नये विचारों के विकल्प सामने आएँगे, विद्यार्थी की जिज्ञासा बढ़ाने, प्रश्न पूछने, समाधान देने के लिये शिक्षक उन्हें प्रोत्साहित करें, उन्हें रोकने से उनमें नया करने का हौसला व सृजनशीलता समाप्त हो जाती है। शिक्षक भी बच्चों के विकास के लिये दी गई गतिविधियों में संलग्न हो, निरन्तर अभ्यास द्वारा उन्हें अपने-अपने क्षेत्र में विकसित करने का प्रयास करें, इससे शिक्षण की क्रियाशीलता और व्यवहारिकता बढ़ेगी। यह शिक्षण विद्यार्थी के उच्च माध्यमिक शिक्षा में प्रवेश करते समय विषय के चयन को सहज बनायेगा। योग्य नागरिक बनने की दिशा में विद्यार्थी दृढ़ता और विश्वास के साथ उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिये उन्मुख होगा। भारत में प्राचीन काल से पारिवारिक उद्योगों और व्यवसायों को आगे बढ़ाने की परम्परा रही है। आज भी ग्रामीण पृष्ठभूमि में रहने वाले या गाँवों से शहरों की ओर पलायन कर चुके परिवारों के विद्यार्थी पारिवारिक आय में योगदान के लिये लघु एवं कुटीर उद्योग, हस्तशिल्प, कृषि व्यवसाय एवं अन्य उद्यमिता से जुड़े कार्यों को आजीविका का माध्यम बनाना चाहते हैं। शिक्षा में तेजी से बढ़ते वैश्वीकरण व तकनीकी विकास के साथ इन परंपरागत उद्यमों का संवर्धन होगा। उत्पादों की गुणवत्ता और उत्पादन बढ़ने से शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ेगी। विद्यार्थी माध्यमिक शिक्षा से पहले ही ड्रॉप आउट नहीं करेंगे।

इस प्रक्रिया में आंकिक व संख्यात्मक मूल्यांकन करने की अपेक्षा विद्यार्थी के सीखने की व जानने की तत्परता, समझ बढ़ाने और नया करने की आतुरता, कल्पनाशीलता व सृजनशीलता जैसे गुणात्मक विश्लेषण का मूल्यांकन उचित होगा। विद्यार्थी को कला, साहित्य, प्रबन्धन, उद्यमिता, व्यवसाय, कौशल आदि विषयों में अपनी प्रतिभा प्रकट करने व योग्यता विकसित करने के अवसर देना उन्हें उच्च शिक्षा की ओर अग्रसर करने का महत्त्वपूर्ण कदम होगा। ❑ क्रमशः .....

(व्याख्याता रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)

विश्वविद्यालय या डिग्री बाँटने वाले कारखाने

❑ प्रो. गिरीश्वर मिश्र

उच्च शिक्षा में शामिल छात्रों की विशाल संख्या को देखने पर भारत की उच्च शिक्षा विश्व में अन्यतम लगती है, लेकिन विस्तार में जाने पर इसकी स्थिति एक अंधी सुरंग जैसी लगती है, जिसमें कई मोड़ एवं रुकावटें हैं और गंतव्य अस्पष्ट है। इस अंधी सुरंग से बाहर निकलने का कोई रास्ता भी नहीं दिख रहा है। शिक्षक और शिक्षार्थी इस सुरंग में जगह-जगह ठहरे हुए हैं। उन्हें रोशनी की प्रतीक्षा है। इस सुरंग का निर्माण अंग्रेजों के समय शुरू हुआ था जब उन्होंने 19वीं सदी में भारत में आधुनिक विश्वविद्यालयों की नींव डाली थी। औपनिवेशिक शासन की जरूरतों के मुताबिक सहायक तैयार करने के लिए उन्होंने शुरू में कॉलेज खोले। इन कॉलेजों के लिए उपाधि देने, पाठ्यक्रम बनाने और उन पर निगरानी रखने की जिम्मेदारी संभालने के लिए विश्वविद्यालय बनाए गए। मद्रास में मेडिकल कॉलेज 1835 में, रुड़की में थाम्पसन इंजीनियरिंग कॉलेज 1847 में और आगरा में सेंट जोंस कॉलेज 1850 में खुले। विश्वविद्यालयों को शिक्षण केंद्र बनाना बहुत बाद की घटना है। कलकत्ता में विश्वविद्यालय तो 1857 में स्थापित हुआ, पर वहाँ शिक्षण कार्य 1904 में शुरू हुआ। इसके पहले यह विश्वविद्यालय केवल परीक्षा करवाता था। यही स्थिति मुंबई और मद्रास विश्वविद्यालयों की भी थी जो 1857 में स्थापित हुए थे। तब शिक्षा कॉलेजों द्वारा ही दी जाती थी जो स्वयं स्वतंत्र इकाई की तरह कार्य करते थे।

उच्च शिक्षा की आरंभिक व्यवस्था में विश्वविद्यालय सिर्फ प्रशासनिक कार्य करते रहे और शिक्षण तथा ज्ञान-सृजन की दृष्टि से उनकी भूमिका नगण्य ही बनी रही। यही मॉडल भारतीय उच्च शिक्षा का मूल आधार बना। औपनिवेशिक युग में ही आगे चल कर प्रांतीय सरकारों ने भी उच्च शिक्षा के केंद्र शुरू किए और कॉलेजों को संबद्धता देने वाले विश्वविद्यालय भी स्थापित किए। इससे उच्च शिक्षा का प्रसार और विस्तार हुआ। वर्तमान में उच्च शिक्षा के स्तर पर 85 प्रतिशत छात्र कॉलेजों में पढ़ रहे हैं और 15 प्रतिशत विश्वविद्यालयों में। आज अधिकतर विश्वविद्यालय ज्ञान का सृजन करने वाले केंद्र कम और प्रमाणपत्र जारी करने वाली फैक्ट्री अधिक हैं। स्वतंत्र भारत में केंद्र सरकार को उच्च शिक्षा के नियमन और विस्तार का अधिक अवसर और दायित्व दिया गया। संविधान में शिक्षा को राज्य का विषय स्वीकार किया गया, पर उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, चिकित्सा शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा की दृष्टि से केंद्र को विशेष भूमिका दी गई। स्कूली शिक्षा मूलतः राज्य का विषय है, पर 14 वर्ष की आयु तक प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य रूप से उपलब्ध कराना राज्य और केंद्र, दोनों का दायित्व है। कुल मिलाकर केंद्र शिक्षा के मामले

उच्च शिक्षा की आरंभिक व्यवस्था में विश्वविद्यालय सिर्फ प्रशासनिक कार्य करते रहे और शिक्षण तथा ज्ञान-सृजन की दृष्टि से उनकी भूमिका नगण्य ही बनी रही। यही मॉडल भारतीय उच्च शिक्षा का मूल आधार बना। औपनिवेशिक युग में ही आगे चल कर प्रांतीय सरकारों ने भी उच्च शिक्षा के केंद्र शुरू किए और कॉलेजों को संबद्धता देने वाले विश्वविद्यालय भी स्थापित किए। इससे उच्च शिक्षा का प्रसार और विस्तार हुआ। वर्तमान में उच्च शिक्षा के स्तर पर 85 प्रतिशत छात्र कॉलेजों में पढ़ रहे हैं और 15 प्रतिशत विश्वविद्यालयों में। आज अधिकतर विश्वविद्यालय ज्ञान का सृजन करने वाले केंद्र कम और प्रमाणपत्र जारी करने वाली फैक्ट्री अधिक हैं। स्वतंत्र भारत में केंद्र सरकार को उच्च शिक्षा के नियमन और विस्तार का अधिक अवसर और दायित्व दिया गया।

में अधिक सक्षम है। संविधान के 42 वें संशोधन द्वारा शिक्षा को पूर्ण रूप से समवर्ती सूची में रखकर केंद्र को राज्यों का स्थायी सहयोगी बना दिया गया।

देश में 1857 से 1947 के बीच कुल 20 विश्वविद्यालय स्थापित हुए। 1947 में कॉलेजों की संख्या 500 से भी कम थी। 2014-15 के आँकड़ों के हिसाब से देश में 757 विश्वविद्यालय और 40,760 कॉलेज हैं। केंद्रीय विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा के अन्य केंद्रीय संस्थान 162 हैं। मानित यानी डीम्ड विश्वविद्यालय 160, निजी विश्वविद्यालय 267 और 168 राज्य शासन के विश्वविद्यालय हैं। छात्र संख्या बढ़ी जरूर है, लेकिन अभी भी 18 से 23 वर्ष के आयु-वर्ग में केवल 24 प्रतिशत छात्र ही उच्च शिक्षा में अध्ययनरत हैं। केंद्र सरकार ने उच्च शिक्षा को नियमित करने के लिए अनेक नियामक संस्थाओं जैसे- यूजीसी, नैक, एमसीए. एनसीटीई इत्यादि का गठन किया जो मान्यता देने, कार्य-दशाओं, वेतनमान तय करने आदि का कार्य करती हैं।

केंद्र ही नेट, नीट, मैट, कैट, जेईई आदि प्रवेश परीक्षाएँ कराता है। प्राय: यह माना जाता है कि उच्च शिक्षा के हर पक्ष पर केंद्र का नियंत्रण है। अध्यापकों की सेवा शर्तें, वेतनमान, अर्हता, कार्य के घंटे, प्रोन्नति आदि यूजीसी ही तय करता है। राज्य सरकारें इन्हें लागू करने में न केवल हीला-हवाली करती हैं, बल्कि प्राय: ग्रांट न देने के कारण या फिर भविष्य में अपने बल पर वेतन आदि देने के बदले केंद्र की अनेक योजनाओं का लाभ ही नहीं उठाती हैं। इससे राज्य शासित अनेक विश्वविद्यालयों में स्वीकृत पद लैप्स हो जाते हैं। राज्यों को लगता है कि उनके अधिकारों का हनन हो रहा है। वे विकल्प ढूँढ़ते हैं। उन्होंने नेट की जगह स्लेट चलाया।

केंद्र सरकार ने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों, भारतीय प्रबंधन संस्थानों, केंद्रीय विश्वविद्यालयों और राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं आदि की स्थापना की। उन्हें पर्याप्त साधन मुहैया कराए और उच्च शिक्षा की गुणवत्ता सुनिश्चित करने पर ध्यान दिया। दूसरी ओर

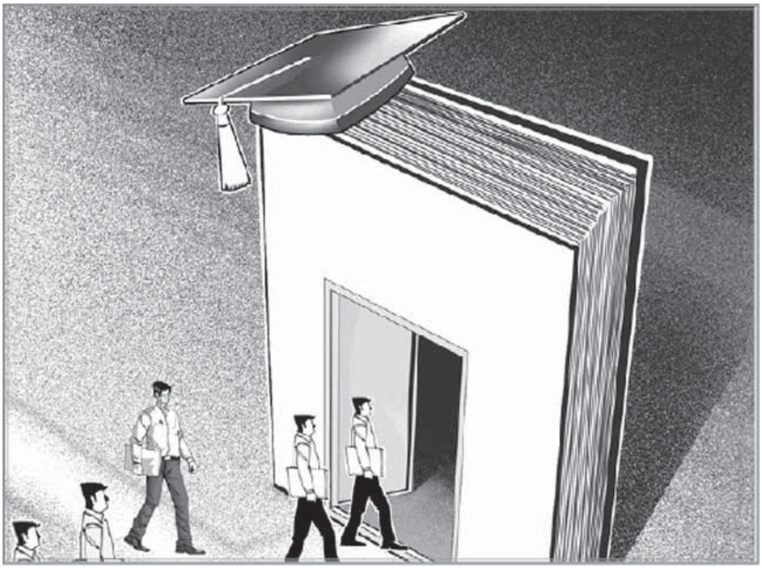

राज्य सरकारों ने आँख मूंदकर उच्च शिक्षा के विस्तार का काम किया। पिछले कुछ दशकों में केंद्र ने गुणवत्ता के साथ उच्च शिक्षा की सुविधाओं के विस्तार को अंजाम दिया और अनेक केंद्रीय विश्वविद्यालय और संस्थान खोले। दूसरी ओर राज्य सरकारों ने राजनीतिक दबाव और लोकप्रियता अर्जित करने के लिए गुणवत्ता का ध्यान रखे बगैर उच्च शिक्षा को बढ़ावा दिया। इससे शिक्षा की गुणवत्ता गिरी। फिर निजी क्षेत्र भी इसमें शामिल हो गया और स्ववित्तपोषित कॉलेजों की भरमार हो गई। आज ज्ञान या कौशल से रहित शिक्षित बेरोजगारों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। उच्च शिक्षा की व्यवस्था में स्वायत्तता कम है और सरकारी नियंत्रण अधिक, जो अनपेक्षित दखल के रूप में बढ़ता जा रहा है। भरोसे और विश्वास की कमी के कारण शैक्षिक परिवेश में क्षोभ का वातावरण पनप रहा है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निजीकरण ने एक और आयाम जोड़ा। पहले तो सरकारें इससे बचती रहीं, लेकिन नौवें दशक में शुरू हुए उदारीकरण के दौर में निजीकरण तेजी से बढ़ा। समवर्ती सूची का लाभ लेते हुए अनेक राज्यों ने अपने एक्ट बनाए। इसी के साथ निजी विश्वविद्यालयों की धूम मच गई। यूजीसी ने मात्र यह कहा कि ये विश्वविद्यालय संबद्धता नहीं देंगे और नया कार्य क्षेत्र प्रदेश तक ही सीमित रहेगा। 2016 तक 239 निजी विश्वविद्यालय स्थापित हो गए। निजी कॉलेजों की संख्या में भी अनियंत्रित वृद्धि हुई और उन्होंने उच्च शिक्षा की रंगत बदल दी। सरकारी विश्वविद्यालयों से संबद्ध ये कॉलेज संख्याबल के कारण समूची व्यवस्था पर हावी हुए जा रहे हैं।

आपसी जोड़-तोड़ के चलते निहित स्वार्थसाधन के लिए विश्वविद्यालय प्रशासन पर अतिरिक्त दबाव बनता है। इसके दुष्परिणाम राज्य शासित विश्वविद्यालयों में अनेक रूपों में दिखते हैं। शिक्षा का सुचारु रूप से संचालन केंद्र और राज्य का साझा दायित्व है। साझा दायित्व में आपसी समझदारी और सहयोग की जरूरत होती है, लेकिन आज राज्यों और केंद्र के बीच राजनीतिक उठापटक चलती ही रहती है। अब तो सरकार बदलने के साथ उच्च शिक्षा की संस्थाएँ बलि का बकरा बन जाती हैं और उन पर येन केन प्रकारेण राजनीतिक नियंत्रण स्थापित करने की होड़ मच जाती है। चूंकि शैक्षिक गुणवत्ता ही विश्वविद्यालयों की पूंजी है इसलिए उसकी रक्षा और संवर्धन की दृष्टि से विश्वविद्यालयों के ढाँचे पर ध्यान देना होगा और उन्हें स्वायत्त केंद्रों के रूप में विकसित करना होगा। ❑

(कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा)

शिक्षा से समरसता

❑ रमेश नैयर

वही व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र स्थिर, श्रीसम्पन्न और बलवान होता है जो समरस हो। अंतर्द्वंद्वों से उनकी ऊर्जा का क्षय होता है। सभ्यताओं के उत्थान-पतन और राष्ट्रों के निर्माण तथा विखंडन का इतिहास बताता है कि जिस देश और समाज में विविध विचारों, मान्यताओं, परम्पराओं और आस्थाओं को आत्मसात कर लेने की जितनी क्षमता होती है, वह उतना ही समरस होता है।

प्रश्न उठता है कि समरसता का विस्तार कैसे किया जाए? मेरी विनम्र धारणा है कि हर बात की तरह इसकी शुरुआत भी घर से ही होती है। अगला चरण होता है स्कूल। पिछले कुछ दशकों से घर डगमगा गये हैं। मुख्यतः आर्थिक और सामाजिक कारणों से वे संयुक्त परिवार बिखर गये जहाँ दादा-दादी, बुआ, चाचा-चाची, ताऊ-ताई आदि एक साथ रहते थे। रसोई सांझी होती थी। माना उनके बर्तन कभी खड़कते और टकराते भी थे, परन्तु उनकी खनखनाहट में मन के सूनेपन को भरने वाला किसी किस्म का संगीत भी होता था। वे संयुक्त परिवार अनेक आर्थिक-सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारणों से अब लगभग अतीत की स्मृतियाँ बन कर रह गये हैं। उनकी जगह ले चुके हैं छोटे परिवार, जिनमें माता-पिता और एक-दो बच्चों के अलावा बहुत हुआ तो बुआ अथवा चाचा रह पाते हैं। उनमें भी संवाद को लील जाने वाला टीवी और प्रायः प्रत्येक सदस्य के हाथ में मोबाइल अथवा उसी प्रजाति का कोई अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है। जैसे-जैसे हम डिजिटल 'इंडिया' होते जायेंगे यही सब हमारे संगी-साथी होते जाएंगे।

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का संग साथ होता जाना अपने-आप में बुरा नहीं है। उनसे जीवन में सुगमता आती है। पढ़ने-लिखने, हिसाब-किताब, कई तरह की भाग-दौड़ में बचाव होता है। सूनापन जो सिमटते परिवारों में महामारी की तरह पसर रहा है, विशेष कर बुजुर्गों के लिए बड़ा अभिशाप बन चुका है। वे घर में होते हैं, परन्तु घर में उनका कोई नहीं है। उनसे छिटक कर घर के अन्य सदस्य भी भरे-पूरे नहीं हैं। बच्चों में कौतूहल, जिज्ञासा और कल्पनाशीलता का वैसा स्फुरण तमाम इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों से नहीं हो पाता, जो पिछली कम-से कम दो पीढ़ियों के शैशव में दादी-नानी द्वारा थपथपाते हुए सुनाये जाते किस्से-कहानियों से हुआ करता था। तब पीपल पर यदि भूत-प्रेत रहते थे तो उनसे बचा कर ले जाने वाली

प्रश्न उठता है कि समरसता का विस्तार कैसे किया जाए? मेरी विनम्र धारणा है कि हर बात की तरह इसकी शुरुआत भी घर से ही होती है। अगला चरण होता है स्कूल। पिछले कुछ दशकों से घर डगमगा गये हैं। मुख्यतः आर्थिक और सामाजिक कारणों से वे संयुक्त परिवार बिखर गये जहाँ दादा-दादी, बुआ, चाचा-चाची, ताऊ-ताई आदि एक साथ रहते थे। रसोई सांझी होती थी। माना उनके बर्तन कभी खड़कते और टकराते भी थे, परन्तु उनकी खनखनाहट में मन के सूनेपन को भरने वाला किसी किस्म का संगीत भी होता था। वे संयुक्त परिवार अनेक आर्थिक-सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारणों से अब लगभग अतीत की स्मृतियाँ बन कर रह गये हैं।

परियाँ भी आकाशगंगाओं से उतर कर हमारे सिरहाने खड़ी हो जाया करती थीं। अब तो टेलिविजन पर भी परियों की कहानियाँ नहीं आतीं। वयस्कों के लिए बनी फिल्में और टीवी सीरियल बच्चे भी देखते हैं। ये उन्हें कच्ची उम्र में ही प्रौढ़ बनाने लगती हैं। शैशव जल्दी ही प्रौढ़ों के संसार में प्रवेश करने लगता है। स्थिति यह है कि बच्चा बारह-चौदह वर्ष का होते-होते बीसियों हत्याओं और अन्य जघन्य अपराधों, घटनाएँ टीवी तथा फिल्मों पर देख चुका होता है।

रही समरसता के इस दूसरे चरण की बात तो हमारे विद्यालयों में जो हो रहा है वह पुलकित तो कतई नहीं करता। एक ही समाचार पत्र में सरहद के आर-पार के स्कूलों के बारे में दो खबरें एक ही पृष्ठ पर पढ़ने को मिलीं, पाकिस्तान के प्रमुख अखबार 'डॉन' में वहाँ के सेना प्रमुख जनरल कमर जावेद बाजवा का एक बयान छपा। उसमें कुछ तल्खी और कुछ निराशा के साथ कहा गया कि चारों तरफ बड़ी तादाद में फैले मदरसों में जो मजहबी तालीम दी जा रही है, उससे या तो मौलवी पैदा हो रहे हैं या फिदाईन। जनरल बाजवा ने अपने बयान में प्रश्न खड़ा किया कि मदरसों में जो 25 लाख बच्चे पढ़ रहे हैं उनसे जितने मौलवी तैयार होंगे उनको काम में लगाने के लिए उतनी मस्जिदें चाहिए वो कहाँ से लाएँगे? अपने देश में इसी बयान के साथ हमारे गुरुग्राम में एक स्कूल में 17-18 वर्ष के एक विद्यार्थी द्वारा दूसरी कक्षा के एक छात्र की शाला परिसर के बाथरूम में हत्या कर देने की खबर छपी। इससे पहले और इसके बाद भी स्कूली बच्चों द्वारा अपने सहपाठियों की हत्या करने अथवा उन्हें बुरी तरह से जख्मी कर देने की घटनाएँ प्रकाश में आती रही हैं। ये कैसे स्कूल हैं जहाँ किशोर होने से पहले ही बच्चे गंभीर अपराधों में लिप्त पाये जाने लगे हैं। जिन स्कूलों में इस प्रकार की घटनाएँ हो रही हैं, वे आमतौर पर मँहगे स्कूल हैं जहाँ अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दी

जाती है। प्रश्न उठता है दोष किसका है? पालकों, अध्यापकों, स्कूल प्रबंधन अथवा सामाजिक परिवेश का?

अब जरा छोटे शहरों, कस्बों और ग्रामीण क्षेत्रों के बारे में सोचिए। वहाँ के सरकारी और गैर-सरकारी स्कूलों में एक बड़ा फर्क यह है कि निजी स्कूल मुख्यत: अंग्रेजी माध्यम से पढ़ाते हैं। सरकारी स्कूलों में सामान्यत: आरम्भिक शिक्षा हिन्दी अथवा उन राज्यों की क्षेत्रीय भाषा में दी जाती है। इससे भी समाज बँटता है। अंग्रेजी माध्यम के एक स्कूल के बच्चे ने बातचीत में मुझसे बड़े भोलेपन से कहा, 'अंकल, जिसे आप भगवान कहते हैं उसे हमारे स्कूल में गॉड कहा जाता है।' अंग्रेजी और हिन्दी माध्यम के स्कूलों के बच्चों में कैसी समरसता पनपती होगी, उसका अनुमान भी बच्चे के इस एक वाक्य से लगाया जा सकता है। सहसा विद्वान समाजवादी विचारक और राजनेता डॉ. राममनोहर लोहिया के उस बयान का ऐतिहासिक स्मरण हो आता है, जिसमें उन्होंने माँग की थी कि भारत में केवल एक जैसे ही सरकारी स्कूल होने चाहिए। चपरासी से लेकर बड़े अफसर और मंत्री के बच्चे भी उन्हीं स्कूलों में पढ़ें। डॉ. लोहिया ने आगे कहा था कि जब कलेक्टर और मंत्री का बच्चा मलिन बस्ती के बच्चों से चंद गालियाँ सीख कर घर में उनका इस्तेमाल करेगा तो प्रशासकों और नीति-निर्माताओं को लगेगा कि स्कूली शिक्षा में कुछ गड़बड़ है, जिसे सुधारा जाना चाहिए।

जापान और ब्रिटेन में मुख्यत: एक जैसे ही स्कूल हैं, जिनमें उन देशों की राष्ट्रभाषा में शिक्षा दी जाती है। जापान में तो ये व्यवस्था है कि सभी बच्चे अपने-अपने घरों से किसी एक ठिकाने पर एकत्र होते हैं और वहाँ से पैदल ही अपने स्कूल पहुँचते हैं। किसी भी पालक को स्कूल तक अपने बच्चे को वाहन से छोड़ने की अनुमति नहीं है। वहाँ प्रत्येक विद्यार्थी अपना डेस्क स्वयं झाड़-पोंछ कर साफ करता है। व्यवस्था यह भी है कि सप्ताह में एक दिन बच्चों की विभिन्न टोलियाँ स्कूल के प्रसाधनों की सफाई भी बारी-बारी से करती हैं। क्या इसे सामाजिक समरसता के प्रथम शालेय पाठ के रूप में नहीं लेना चाहिए? सुना है हमारे पुराने गुरुकुलों में कुछ ऐसी ही समरसता की व्यावहारिक दीक्षा दी जाती थी। वहाँ राजा और रंक के बच्चे एक साथ पढ़ा करते थे। तब हमारे यहाँ शिक्षा की परिभाषा थी, '**सा विद्या या विमुक्तये**' इस परिभाषा ने ही ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को मैकाले की शिक्षा प्रणाली लागू करने के लिए प्रेरित किया था। अंग्रेज चले गये, लॉर्ड मैकाले अभी तक हावी हैं। वे ही भारतीय समाज के समरस होने में बाधक हैं। ❑

रामचरित मानस की प्रांसगिकता

❑ प्रियंका कुमारी गर्ग

तुलसीदास का वर्ण व्यवस्था के प्रति विचार हमेशा चिन्तन का विषय रहा है। वर्ण व्यवस्था समर्थक होने के आरोप तुलसी पर लगते रहे पर वर्ण व्यवस्था में कर्म और गुण की प्रमुखता उनके विचारों में स्पष्ट है। निषादराज और शबरी प्रसंग मानस के वो प्रसंग हैं, जो प्रत्येक सहृदय व्यक्ति के मर्म को छूते हैं। निषादराज भगवान राम के लिए हर जाति से ऊपर है। भाई के समान उसे हृदय से लगाना उन लोगों के लिए सबक है, जो जाति और धर्म के नाम पर रक्तपात और हिंसा से हिचकते नहीं हैं। समस्त समस्याओं का हल केवल प्रेम ही हो सकता है। प्रेम पूर्वक खिलाए गए शबरी के बेर को प्रभु बड़े ही प्रेमपूर्वक ग्रहण करते हैं। समन्वय एवं प्रेम भाव ही समाज में फैले वैमनस्य का एकमात्र हल हो सकता है।

वर्तमान आधुनिकतावादी युग में जब समाज का युवा वर्ग भौतिकतावादी संस्कृति की दौड़ में शामिल हो गया है, मानवीय मूल्यों की कमी चिन्तित करती है। ऐसे समय में साहित्य ही वो प्रकाश स्तंभ है, जो हमें मानवता के पथ पर अग्रसर करता है। तुलसीदास जी का साहित्य इस बाजारवादी युग में प्रत्येक समस्या का समाधान उपलब्ध कराता है। अपनी मध्ययुगीन सीमाएँ तोड़कर तुलसी साहित्य आज भी प्रासंगिक है। तुलसी का सहित्य मानव कल्याण की धारणा पेश करता है।

'कीरति भनिति भूति भलि सोई,
सुरसरि सम सब कहँ हित होई'।

मानव कल्याण के बिना समस्त भौतिक संसाधन भी व्यर्थ हैं। आपाधापी के युग में जब सभी केवल अपने-अपने हित के लिए व्यस्त हैं, वहीं गंगा के समान कल्याण की बात करना युवा वर्ग के लिए प्रेरणादायक है।

तुलसीदास का वर्ण व्यवस्था के प्रति विचार हमेशा चिन्तन का विषय रहा है। वर्ण व्यवस्था समर्थक होने के आरोप तुलसी पर लगते रहे पर वर्ण व्यवस्था में कर्म और गुण की प्रमुखता उनके विचारों में स्पष्ट है। निषादराज और शबरी प्रसंग मानस के वो प्रसंग हैं, जो प्रत्येक सहृदय व्यक्ति के मर्म को छूते हैं। निषादराज भगवान राम के लिए हर जाति से ऊपर है। भाई के समान उसे हृदय से लगाना उन लोगों के लिए सबक है, जो जाति और धर्म के नाम पर रक्तपात और हिंसा से हिचकते नहीं हैं। समस्त समस्याओं का हल केवल प्रेम ही हो सकता है। प्रेम पूर्वक खिलाए गए शबरी के बेर को प्रभु बड़े ही प्रेमपूर्वक ग्रहण करते हैं। समन्वय एवं प्रेम भाव ही समाज में फैले वैमनस्य का एकमात्र हल हो सकता है।

तुलसी मध्ययुग में भी अपने गहन राजनीतिक बोध के लिए प्रसिद्ध है। राम भगवान के रूप में नहीं वरन् मानव के रूप में प्रदर्शित किए गए हैं। राम समस्त मानवीय कमजोरियों से युक्त हैं। परन्तु उनका शत्रुओं के प्रति व्यवहार राजनीति का एक श्रेष्ठ उदाहरण है। कम संसाधन होते हुए भी दुराचारी का प्रतिकार करना, शत्रु के भाई विभीषण के प्रति राम का व्यवहार, समुद्र से पहले प्रेम से सहायता माँगना, सहायता न देने पर क्रुद्ध होना किसी भी राजा के लिए प्रेरक हो सकते हैं।

'भय बिनु होइ न प्रीत' कहते हुए तुलसीदास चाणक्य समान प्रतीत होते हैं। तुलसी की राम राज्य की अवधारणा आज की राजनीति के लिए समाधान के रूप में सामने आती है।

'दैहिक दैविक भौतिक तापा,
राम राज नहिं काहुहि व्यापा'।

तुलसी की प्रजातान्त्रिक चेतना का उदाहरण-

'जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी,
सो नृप अवसि नरक अधिकारी।'

राजा के गलत निर्णय की आलोचना का अधिकार भी तुलसी जनता को देते हैं।

'सोई सेवक प्रियतम मम सोई,
मम अनुशासन मानै जोई।
जो अनीति कछु भासो भाई,
तो मौहि बरजहु भय विसराई।'

वर्तमान समय में छोटी-छोटी कन्याओं के साथ दुराचार की जो घटनाएँ हो रही है वो किसी भी सामान्य व्यक्ति का हृदय व्यथित कर सकती हैं। पॉस्को एक्ट के बनने के लगभग 550 वर्ष पूर्व ही तुलसी स्त्रियों के प्रति अनाचार करने वालों को मृत्यु दण्ड का अधिकार देते हैं।

अनुजवधू भगिनी सुत नारी,
सुन सठ कन्या सम ए चारी।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई,
ताई वधें कछु पाप न होई।।

इसके साथ ही ढोंगी आध्यात्मिक गुरुओं की जो बहुतायत आज के समय में हुई है, तुलसी उसके प्रति अपने समय में ही सचेत थे। गुरु का कर्तव्य, शिष्य का कर्तव्य, गुरु और शिष्य का परस्पर भाव इनके विषय में रामचरितमानस के बालकांड और उत्तरकांड की उक्तियाँ प्रसिद्ध हैं।

नारि मुई गृह संपति नासी,
मूड मुडाई होहि संन्यासी।

ऐसे बाबा जो प्रवचन को केवल धन प्राप्ति का साधन मानते हैं, कोई अन्य उपाय न देख बाबा बन जाते हैं उनके लिए ये पंक्तियाँ सटीक है।

जाके नख अरू जटा विसाला,
सोई तापस प्रसिद्ध कलिकाला।

अभी हाल ही में कुछ बाबाओं के घृणित कार्य उजागर हुए है, उनसे सचेत रहने की बात तुलसी वर्षों पूर्व कह चुके हैं।

शिक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर लिखने वाले तुलसी प्रथम मध्यकालीन लेखक हैं। शिक्षक का कर्तव्य केवल बड़ी फीस लेना नहीं बल्कि शिष्य का सर्वांगीण

विकास करना है। आज जब निजी विद्यालयों की फीस बढ़ाने का मुद्दा बार-बार उठता है, वहीं बच्चों के नैतिक एवं शारीरिक विकास की बात कोई नहीं करता है। विद्यालय अपने छात्रों का विश्वकोष बनाना चाहते हैं परन्तु वे आदर्श मानव बने यह उनकी प्राथमिकता का विषय नहीं रहा।

'हरई शिष्य धन शोक न हरई,
सो गुरु घोर नरक मह परई।'

शिक्षकों के साथ ही माता पिता का भी शिक्षा के प्रति दायित्व बताना तुलसी नहीं भूलते हैं।

मातु पिता बालकहिं बुलावहिं,
उदर भरई सोई धर्म सिखावहि।

माता-पिता का एकमात्र ध्यान बच्चों को ऐसे पाठयक्रम पढ़ाने पर है, जिससे अधिकाधिक आय अर्जित की जा सके। केवल विद्यालय और शिक्षक ही नहीं माता पिता भी अपने कर्तव्यों को भूल गए हैं। तुलसी का विचार हर अभिभावक के लिए प्रासंगिक है।

पर्यावरण जैसे गंभीर विषय पर भी

तुलसी ने गहराई से प्रकाश डाला है। ग्लोबल वार्मिंग और वन संरक्षण पर जो चिन्तन 20 वीं सदी में शुरू हुआ उस पर तुलसी पहले ही अपनी चिन्ता प्रकट कर चुके थे।

फूलहि फरहि सदा तरू कानन,
रहहि एकसंग गज पंचानन।

स्त्री विमर्श की जो धारणा आज लोकप्रिय है, इसके वर्षों पूर्व तुलसी ने स्त्री के मर्म को समझने की कोशिश की है।

कत विधि सृजी नारी जग माहीं,
पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।'

तुलसी स्त्री की स्वतन्त्रता के तो पक्षधर हैं परन्तु स्वच्छंदता के परम विरोधी है। यह बात शूर्पनखा के प्रसंग से स्पष्ट है।

इन समस्त बातों से उपर तुलसी का मानवता का उपदेश न केवल मध्य युग में, वर्तमान युग में, बल्कि भविष्य में भी युगों तक समाज के लिए उपयोगी होगा।

'परहित सरिस धरम नहीं भाई,
परपीडा सम नहीं अधमाई।

तुलसी ने अपने समय में जो काव्य लिखा वह वर्तमान समाज के लिए महत्त्वपूर्ण है। एक प्रकाश स्तम्भ जिस प्रकार समुद्र में खोए व्यक्ति को राह दिखाता है, उसी प्रकार तुलसी का काव्य भी युगों-युगों तक समाज को मानवता के पथ पर अग्रसर करता रहेगा। ❑

(सहा. आचार्य, महाराजा कॉलेज,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर)

A National level Media Workshop was held in IIMC, Delhi

A two-dayNational level Media A two-dayNational level Media workshop was held on 5-6 May 2018, jointly organised by Indian Institute of Mass Communication (IIMC) New Delhi and Shaikshik Foundation. The venue for the workshop was IIMC. The inaugural session of the workshop was presided over by the President of Akhil Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh (ABRSM), Prof. J. P Singhal. Prof. Singhal has been the former Vice-Chancellor of Rajasthan University. The main speaker of the inaugural session was Prof. Rakesh Sinha, Honorary Director of India Policy Foundation and a faculty at University of Delhi.The dais was shared by the General Secretary ABRSM, Shri Sadanand Sindankera, Director of IIMC, Shri K.G Suresh.Speaking on the occasion, Prof. Sinha said that journalism in the west has been driven by capitalism but journalism in the east has been driven by ideas, ideology and courage. He also reiterated that the participants and organisers of the workshop share same ideology and profession.Prof. Sinha laid emphasis that the media should connect the news with social cause so as to serve the larger interest of the society. He added that this will mutually benefit the media and the society. He motivated the audience to follow the footsteps of Acharya Kriplani and Kaka Kalelkar.

The Workshop had four sessions. In the first session, Prof. J. P Singhal explained the significance of the name of the organisation. He said that the organisation has a presence in more than hundred universities in twenty-four states. He emphasized that the organisation is driven bynationalist ideology where duties hold the same significance as our rights. During the second session of the workshop, Shri Mahendra Kapoor, National Organisational Secretary of ABRSM deliberated on our identity and significance of our presence in the workshop. He elaborated on an individual's morale and inner strength and its importance in strengthening an organisation. The session was on 'A dialogue with Media'. Editor of Lok Sabha Television Shri Shyam Kishore shared his experiences in the third session. He said that criticising a media house or an individual is not healthy for a democracy. He said that in the present scenario it's important to have our presence in print, electronic and social media. He expressed that personal relationships with those in media makes it easier to have a dialogue and present our viewpoint. The fourth session was on the 'Social Media and its benefits'. Social media activist Shilpi Tiwari shared her sweet and sour experiences. Shri Surendra Chaturvedi, Director, CMRD was also an invited speaker. Shri Sandeep Singh, Founder of Swadeshi School for Training in Indian Knowledge spoke on motivation in life and influencing others.The main speaker in the valedictory session was Shri Ram Bahadur Rai, Director, Indira Gandhi National Centre for Arts (IGNCA).

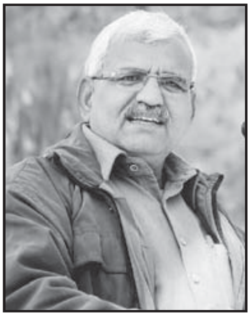

मन के द्वारा विषयों का चिंतन करते रहने से विषयों में आसक्ति हो जाती है जिससे उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है। कामना की प्राप्ति में विघ्न से क्रोध, क्रोध से सम्मोह (महामोह) इससे स्मृति भ्रम व बुद्धिनाश होता है जिससे मनुष्य श्रेय साधन से गिर जाता है। कराग्रे वसते लक्ष्मी, अर्थात् हाथ उपार्जन क्रिया के साधन हैं, यह इनका प्रमुख कार्य है अतः इनके अग्र में श्री का स्थान है। किन्तु श्री को श्रेय किससे मिलता है। उपार्जन की कम अधिक सामर्थ्य का कारण विद्या है, अतः कहा 'कर मध्ये सरस्वती'। किन्तु बुद्धि और धन तो भोगी बना सकते हैं, आसुरी वृत्ति का बना सकते हैं अतः कहा 'कर मूले तु गोविन्दः।' गो अर्थात् इन्द्रियाँ और जिसने इन्द्रियों को वश में कर लिया वह गोविंद है।

*भारतीय संस्कृति में संतों को इंद्रियजित, दिव्य तथा सत्स्वरूप माना जाता रहा है, किन्तु अनेक समसामयिक घटनाएँ हमें भयग्रस्त बनाती हैं क्योंकि हमारे समाज में आज 'साधु' के वेश में विलास-वासनामय कोलाहल उत्पन्न करने वाले अनाचारी व्यभिचारी तथा दुराचारियों की अराजक भीड़ एकत्र हो गई है जो भोली-भाली जनता को दिग्भ्रमित कर उसका कई प्रकार से शोषण कर रहे हैं। 'कुटुम्ब प्रबोधन' का अध्याय-3 **'साधु'** उन्हीं विकृतियों की ओर संकेत करता हुआ उनसे बचने व रामचरित मानस के अनुरूप सच्चे संत की पहचान कर उनके बताये मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। - सम्पादक*

साधु

"**माँ** ने स्वाध्याय प्रारम्भ करते हुए कहा - "आज हम साधु के लक्षण व हमारे कर्त्तव्य का विचार करेंगे। अच्छा बच्चों! बताओ साधु किसे कहते हैं?"

"वो भगवा कपड़े पहने नहीं रहते क्या, अखबारों में आता है कि वो छोटे बच्चों को झोली में डालकर ले जाते हैं।" नन्ही अनन्या तपाक से बोली।

उसे हाथ से रोकते हुए भरत बोला- "नहीं, साधु तो संत होते हैं जो तपस्या करते हैं, प्रवचन देते हैं। टी.वी. पर नहीं देखा क्या योगा कराते हुए?"

माँ ने बात का सूत्र पकड़ते हुए कहा- "यह तो बाह्य क्रिया कलाप हुए। हम रामचरितमानस का स्वाध्याय कर रहे हैं, अतः इसी के माध्यम से समझने का प्रयास करते हैं कि साधु कौन है?"

बालकाण्ड में तुलसीदास जी एक सुन्दर रूपक प्रस्तुत करते हैं-

साधु चरित सुभ चरित कपासू।
निरस बिसद गुनमय फल जासू।।
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा।
बंदनीय जेहिं जग जस पावा।।

इसका शब्दार्थ करेंगे तो ऐसा होगा- "साधु का चरित्र शुभ शुभ्र कपास का चरित्र ही होता है - जिसका फल नीरस, उज्ज्वल और गुणमय होता है। जो स्वयं दुःख सहकर दूसरों के छिद्रों को ढ़ँकता है जिससे जग में वह वंदनीय होता है और यश पाता है। तुम लोगों ने कपास का फल देखा है क्या?"

"हाँ, देखा है।" सब एक साथ बोले। "गत वर्ष वन विहार को गए थे तब देखा। कुछ बंद डोडे थे, कुछ तीन फाँकों में फटे हुए थे और उसमें से फूली हुई कपास बाहर निकली हुई थी।"

"हाँ, बिल्कुल ठीक वर्णन किया। तुलसीदास जी साधु की उपमा कपास से देते हैं। अब एक-एक समानता को समझते हैं। क्या कपास का फल खाने के काम आता है? उससे रस प्राप्त कर सकते हैं?

"नहीं, वहाँ तो हमें बिल्व का रस पिलाया था, कपास का नहीं" नेहा ने सोचते हुए कहा।

"इसीलिए तुलसीदास जी ने उसे नीरस कहा है। पर साधु कैसे नीरस है बताओ?"

"शायद उसे जो भिक्षा में मिले वही खा लेता है, हमारी तरह आज यह खाने का मन करता है या यह नहीं खाना, साधु ऐसा नहीं कहता इसलिए नीरस है।" भरत ने सोचते हुए कहा

"नहीं रे! उसके लिए संसार नीरस है इसीलिए तो घर-बार त्याग दिया। साधु को न खाने में रस आता है, न पहनने में, इसीलिए नीरस कहते होंगे।" दादी ने दार्शनिक भाव से कहा।

माँ बोली- "आप सबके भाव ठीक हैं। देखो हमारी पाँच इन्द्रियाँ हैं। प्रत्येक का अपना रस है। जीभ अलग-अलग स्वाद की इच्छा करते हुए चटोरी हो जाती है, क्यों नन्नू? आँख से हम घूम-घूमकर मन-पसंद दृश्य देखना चाहते हैं, कान से हम इच्छित बातें, संगीत सुनना चाहते हैं, नाक से अच्छी खुशबू लेना चाहते हैं तो त्वचा को सुखद स्पर्श में रस आता है। इन्द्रियों को अनुकूल रस मिलने पर हम प्रसन्न होते हैं और

इन सुखों में तनिक भी व्यवधान से हम खीज उठते हैं। अभी थोड़ी देर बिजली चली गई तो कैसा दृश्य था? इन्द्रियों के अनुकूल व प्रतिकूल रसों को विषय कहते हैं।'' गीता के अध्याय-2 श्लोक 62-63 में इसका वर्णन है :

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते।।
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।

''मन के द्वारा विषयों का चिंतन करते रहने से विषयों में आसक्ति हो जाती है जिससे उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है। कामना की प्राप्ति में विघ्न से क्रोध, क्रोध से सम्मोह (महामोह) इससे स्मृति भ्रम व बुद्धिनाश होता है जिससे मनुष्य श्रेय साधन से गिर जाता है।''

इसमें से बहुत सी बातें तुम्हारी समझ में नहीं आयी होंगी। एक प्रसंग से समझो। कल नन्नू कम्प्यूटर गेम खेल रही थी, सबको मालूम है उसको मौका मिलते ही कम्प्यूटर गेम खेलती है। इस गेम रूपी विषय में आशक्ति के कारण उसमें बार-बार खेलने की कामना, इच्छा जाग्रत होती है। कल तुम्हारी मौसी मिलने आयी थी। मैंने नन्नू को पानी लाने को कहा। उसे खेलने में इतना रस आ रहा था कि उसने तीन बार कहने पर भी अनसुना कर दिया। मैंने चौथी बार थोड़ा जोर से कहा तो यह उठी तो सही, किन्तु अत्यंत गुस्से में पैर पटकते हुए रसोई तक गई और परिणाम हुआ एक गिलास की हत्या। इसलिए कहा कि साधु नीरस होता है, अर्थात् वह अपनी इन्द्रियों के रसों, विषयों का दास नहीं होता। वह इन्द्रियों को अपने वश में करता है। जिन्हें इन्द्रिय सुख चाहिए वो इन्द्रजीत बनकर उसका साम्राज्य हस्तगत करते हैं, जिन्होंने साम्राज्य, सुख-वैभव को ठोकर मारी वे इन्द्रियों को वश में करके 'इन्द्रियजीत' कहलाते हैं उन्हें साधु कहते हैं।''

''माँ, इन्द्रजीत तो रावण का बेटा मेघनाद था न?'' शिवम् ने पूछा

''हाँ बेटा! रावण को त्रिलोक का राज्य चाहिए था उसके लिए इन्द्र को जीतना आवश्यक था। इन्द्र को जीतने के कारण ही मेघनाद का यह विशेषण बना था। हम प्रात: काल कर दर्शन करते समय जो श्लोक बोलते हैं, वह भी इन्द्रियों को रस लोलुप बनने से रोकने का ही संदेश देता है।''

'कैसे?', संघ मित्र ने पूछा।

''कराग्रे वसते लक्ष्मी, अर्थात् हाथ उपार्जन क्रिया के साधन हैं, यह इनका प्रमुख कार्य है अत: इनके अग्र में श्री का स्थान है। किन्तु श्री को श्रेय किससे मिलता है। उपार्जन की कम अधिक सामर्थ्य का कारण विद्या है, अत: कहा 'कर मध्ये सरस्वती'। किन्तु बुद्धि और धन तो भोगी बना सकते हैं, आसुरी वृत्ति का बना सकते हैं अत: कहा 'कर मूले तु गोविन्द:।' गो अर्थात् इन्द्रियाँ और जिसने इन्द्रियों को वश में कर लिया वह गोविंद है।'' थोड़ा रुककर माँ ने पुन: वार्ता का सूत्र पकड़ते हुए कहा-

''साधु का दूसरा लक्षण क्या बताया है? वह है कपास की तरह विशद अर्थात् उज्ज्वल होना। कपास के रेशे शुभ्र होते हैं। साधु कैसे उज्ज्वल होता है?''

''उज्ज्वल यानि साफ, मैल रहित। जैसे धुले हुए कपड़े।'' भरत ने कहा।

''अच्छी बात है। पर व्यक्ति कैसे उज्ज्वल होता है? क्या कपड़े धोने की तरह नहाने से?''

''नहीं, केवल नहाने से नहीं। अच्छे कामों से भी'' नेहा बोली।

''बिल्कुल ठीक। साधु कपास की तरह उज्ज्वल है अर्थात् साधु वह है जो निष्काम, नि:स्वार्थ व निष्पाप होने के कारण निर्मल और उज्ज्वल चरित्र होता है।''

तुलसीदास जी आगे कहते हैं 'गुनमय फल जासू' अर्थात् जिसका फल गुनमय है। कपास का फल गुनमय कैसे है?''

सब सोच में पड़ गए। बोले - ''साधु के लिए तो बता सकते हैं कि गुनमय अर्थात् अच्छे-अच्छे गुणों से युक्त। पर कपास का तो हमें समझ नहीं आता।''

माँ बोली- ''कपास के रेशों, तंतुओं को भी गुन कहते हैं। जिसमें जितने सद्गुण होते हैं वह उतना ही श्रेष्ठ है उसी प्रकार जिस कपास के तंतु जितने लम्बे होते हैं वह भी उत्तम गुणवत्ता का कहलाता है तथा बाजार में उसका मूल्य अधिक मिलता है।

अब एक अंतिम उपमा बची है। 'जो सहि दुख पर छिद्र दुरावा' इसका कपास व साधु के सम्बन्ध में अर्थ समझना है। आप में से कोई बतायेगा क्या?''

''कपास का तो मैं बता सकता हूँ'' भरत बोला।

''हमारी पुस्तक में पाठ था कि कपड़े का आविष्कार कैसे हुआ? कपास को ओटने, धुनने, कातने, बुनने तथा सिलने की प्रक्रियाओं में से गुजरना पड़ता है तब वह हमारा तन ढँकता है। यानि हमारे शरीर को ढँकने के लिए कपास कष्ट पाता है। तो साधु भी कपास की तरह परोपकार के लिए तपस्या करते हैं फिर हमें अच्छी बातें बताने के लिए प्रवचन देते हैं, कथा करते हैं, भजन गाते हैं'' नेहा बोली।

''बिल्कुल ठीक। आप दोनों ने तो मेरा काम हल्का कर दिया। कपास द्वारा 'परछिद्र दुरावा' की एक बात और ध्यान देने की है। कपास से बना हुआ धागा अपना तन देकर जब सूई का छेद भरता है तब सूई सिलाई करने में सफल होती है। इसी प्रकार संत भी पराये दोषों, अपकारों के बाद भी उपकार ही करते हैं और दूसरों के अवगुणों को गुणों से ढक देते हैं। इसीलिए तुलसीदास जी ने संतों को चलते फिरते तीर्थराज कहा है। बाकि तीर्थों तक हमको जाना पड़ता है। संत ऐसे तीर्थ

हैं जो हम पर उपकार करने के लिए चलकर हमारे पास आते हैं।

''मुद मंगलमय संत समाजू।
जो जग जंगम तीरथराजू।।''

अर्थात् संत समाज आनन्दमय (मुद) मंगलमय (कल्याणकारी) तथा संसार में चलते फिरते तीर्थराज प्रयाग हैं।''

माँ ने पुन: कहना प्रारम्भ किया-

''अच्छा, तुम्हें वह प्रसंग याद है क्या जब हनुमान जी माता-सीता की खोज करने लंका नगरी गए थे। वहाँ सब जगह उन्हें निशाचर अकरणीय कार्य करते हुए दिखे तो उन्होंने निराश होकर कहा- लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा।।' किन्तु एक घर पर कुछ शुभ लक्षण उन्होंने देखे थे। कौन बतायेगा वह दोहा जिसमें साधु, सज्जन पुरुष के घर के बाह्य लक्षण दिये हैं?''

''मैं बता सकता हूँ'' भरत बोला

''रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ।।''

''और फिर हनुमान जी ने सज्जन होने की प्रारम्भिक पहचान 'रामनाम के स्मरण' के आधार पर करते हुए साधु का एक लक्षण और बताया है, वह चौपाई कौन बता सकता है?''

नेहा बोली- ''मंगलवार को सुन्दर काण्ड का पाठ करते हैं, तो सभी को याद है। अब तो आपने संकेत भी कर दिया तो सुनें -

''राम-राम तेहिं सुमिरन कीन्हा।
हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा।।
एहि सन हठि करिहऊँ पहिचानी।
साधु ते होइ न कारज हानी।।''

''साधु से कार्य की हानि नहीं होती, उससे किसी भी विषय पर राय की जा सकती है, उचित समाधान ही मिलेगा। अत: साधु से हठपूर्वक भी परिचय करना पड़े तो भी सानिध्य लाभ लेना चाहिए।

आज की चर्चा यहीं पूरी करते हैं।''❑ *क्रमश: ...*

टेक्नोलॉजी के युग में नैतिक धार वाली शिक्षा और भी जरूरी

❑ नरपत दान चारण

अध्यादेश के जरिये कड़ा कानून लाए जाने के बाद भी देश में दुराचार की घिनौनी घटनाएँ थमने का नाम नहीं ले रही हैं। दरअसल, यह इस बात का लक्षण है कि हमारा समाज संस्कारों और नैतिक गुणों से विहीन होता जा रहा हैं। आए दिन देश में दुराचार, हत्या, शोषण के समाचार पढ़ते-सुनते हैं और सोचते हैं कि हम किस दिशा में जा रहे हैं। तब और दुख होता है, जब शिक्षित लोग भी ऐसे अपराधों में लिप्त पाए जाते हैं। सवाल उठता है कि सख्त कानून के बावजूद भी आखिर भय क्यों नहीं है? क्योंकि शिक्षित लोग भी ऐसे अपराध कर रहे हैं? क्योंकि सवाल भय का नहीं, नैतिकता का है, जो लगभग खत्म है।

हमारे धर्म ग्रंथों में भी लिखा है कि नैतिक पतन समाज को मानवीय मूल्यों से खोखला कर देता है। नैतिकता उचित शिक्षा से ही आती है। शिक्षा ही समाज का प्रेरक बल है और शिक्षक उसकी प्रेरणा। इसलिए इस नैतिक पतन के लिए कहीं न कहीं हमारी शिक्षा पद्धति जिम्मेदार है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में भौतिकता की अधिकता है। जहाँ हमारी शिक्षा का दर्शन नैतिक और मानवीय होना चाहिए वहीं दुर्भाग्यवश हमारी शिक्षा प्रणाली में व्यावसायिकता हावी है। यह एक सीमा तक सही है कि हम रोजगारपरक शिक्षा से डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, उद्यमी तैयार कर रहे हैं मगर बदलते परिवेश में जरूरत है ऐसी शिक्षा की जो पूर्णतया शोषणमुक्त और न्यायसंगत समाज का निर्माण करने में सहायक हो। हमें ऐसा समाज बनाना होगा, जिसमें भौतिकता के साथ नैतिकता, व्यावहारिकता और मानवीय गुणों का समन्वय हो। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कोई भी समाज तब तक समृद्ध नहीं हो सकता जब तक वहाँ दी जाने वाली शिक्षा सामाजिक, लौकिक, व्यावहारिक और नैतिक न हो। संस्कारों और नैतिक मूल्यों के द्वारा सभ्य समाज की स्थापना करना हमारी पहली प्राथमिकता होनी चाहिए।

टेक्नोलॉजी और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के उभरते युग में नैतिकता की जरूरत पहले से कहीं अधिक है, क्योंकि तभी हम लाभ के लोभ से मुक्त होकर टेक्नोलॉजी का उपयोग वृहत्तर मानव कल्याण की दिशा में करने को प्रेरित होंगे।

(वरिष्ठ शिक्षक, बाड़मेर, राजस्थान)

मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने शुरू की
स्कूली शिक्षा के समग्र विकास हेतु 'समग्र शिक्षा' योजना

नई योजना में दो शब्दों 'टू-टी' एवं टेक्नोलॉजी के एकीकरण पर बल देने से शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने में सहायता मिलेगी - श्री प्रकाश जावड़ेकर

केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री प्रकाश जावड़ेकर ने नई दिल्ली में पहली बार स्कूल पूर्व से उच्च माध्यमिक स्तर पर राज्यों को समर्थन देते हुए स्कूली शिक्षा के लिए एक समेकित योजना 'समग्र शिक्षा' योजना की शुरूआत की। यह योजना स्कूली शिक्षा की अवधारणा में महत्त्वपूर्ण बदलाव है और इसमें 'स्कूली शिक्षा' को विद्यालय पूर्व प्राइमरी, अपर प्राइमरी, माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तरों की निरंतरता के रूप में माना गया है।

इस अवसर पर जावड़ेकर ने कहा कि 'सबको शिक्षा, अच्छी शिक्षा' प्रदान करने की प्रधानमंत्री की प्रतिबद्धता के अनुरूप मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने एक ऐतिहासिक कदम उठाया है और स्कूली शिक्षा की वर्तमान योजना को पूरी तरह बदल दिया है ताकि स्कूली शिक्षा को स्कूल पूर्व प्राइमरी, अपर प्राइमरी, माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तरों की निरंतरता के रूप में माना जा सके। योजना का केन्द्र अंग्रेजी के टी शब्द टीचर्स और टेक्नोलॉजी का एकीकरण करके सभी स्तरों पर गुणवत्ता में सुधार लाना है। समग्र का अर्थ संपूर्ण है न कि विभिन्न भागों की संख्या। इस योजना का नामकरण सटीक है क्योंकि यह योजना विभिन्न स्तरों की शिक्षा को बाँटे बगैर स्कूल शिक्षा को समग्र दृष्टि से देखती है।

जावड़ेकर जी ने बताया कि पहले तीन योजनाओं अर्थात् एसएसए, आरएमएसए एवं शिक्षक की शिक्षा पर बजट 2017-18 में 28,000 करोड़ रुपये था। लेकिन नई योजना पर बजट परिव्यय अब 2018-19 में 34,000 करोड़ रुपये एवं 2019-20 में 41,000 करोड़ रुपये होगा, जो 20 प्रतिशत की बढ़ोतरी है और यह केन्द्र सरकार की शिक्षा के प्रति प्रतिबद्धता प्रदर्शित करती है। उन्होंने कहा कि लगभग एक मिलियन स्कूलों के पुस्तकालयों को सुदृढ़ बनाने के लिए 5,000 रुपये से 20,000 रुपये तक का पुस्तकालय अनुदान देय होगा, जिससे कि 'पढ़ेगा भारत, बढ़ेगा भारत' सुनिश्चित हो सके।

उन्होंने यह भी बताया कि प्रत्येक स्कूल को समग्र शिक्षा के तहत प्राथमिक स्तर के लिए 5,000 रुपये, उच्चतर प्राथमिक के लिए 10,000 रुपये तथा एसएससी और एचएससी स्कूलों के लिए 25,000 रुपये तक की कीमत के खेल उपकरण उपलब्ध कराए जाएँगे, जिससे कि 'खेलेगा भारत, खिलेगा भारत' के स्वप्न को साकार करने के लिए खेल की भावना उत्पन्न की जा सके तथा खेलों के महत्त्व पर जोर दिया जा सके। श्री जावड़ेकर ने कहा कि प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' की प्रतिबद्धता को पूर्ण करने के लिए 2018-19 में 4385.60 करोड़ तथा 2019-20 में 4553.10 करोड़ रुपये के आवंटन के साथ कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (केजीबीवी) को विस्तारित कर कक्षा 6-8 से कक्षा 6-12 तक कर दिया गया है।

उन्होंने कहा कि यह योजना ग्रेड एवं विषय अनुसार शिक्षा प्राप्ति परिणामों पर आधारित होगी। शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए जिला स्तर के कदमों के बारे में रणनीति बनाने के लिए 2017-18 में सबसे बड़ा राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण ही है (एनएएस)। इससे विद्यार्थियों को शिक्षा देने हेतु केन्द्रित विषय वस्तु से लेकर योग्यता पर किया जाएगा। योजना में सभी हितधारकों -माता-पिता/अभिभावक, स्कूल प्रबंधन समिति सदस्य, समुदाय तथा राज्यकर्मी सभी की सक्रिय भागीदारी होगी ताकि बच्चों को गुणवत्ता संपन्न शिक्षा सुनिश्चित की जा सके।

जावड़ेकर ने बताया कि शिक्षक स्कूल शिक्षा प्रणाली की धुरी होता है। यह योजना इस महत्त्वपूर्ण स्तंभ को मजबूत बनाने पर फोकस करेगी। यह कार्य प्रशिक्षण के लिए नोडल एजेंसियों-एससीईआरटी तथा डीआईईटी के माध्यम से किया जाएगा। इन संस्थानों को मजबूत बनाया जाएगा ताकि राज्यों में इन-सर्विस और प्री-सर्विस के एकीकरण पर बल दिया जा सके। इससे सभी स्तरों पर स्कूली शिक्षण की गुणवत्ता में मजबूती आएगी।

यह योजना टेक्नोलॉजी का लाभ उठाने और सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को अच्छी गुणवत्ता सम्पन्न शिक्षा की पहुँच को व्यापक बनाने में सहायक होगी। राष्ट्रीय डिजिटल प्लेटफार्म 'दीक्षा' शिक्षकों के उपयोग के लिए उच्च गुणवत्ता की शिक्षण सामग्री उपलब्ध कराएगा। यह योजना पांच वर्षो से अधिक सभी माध्यमिक विद्यालयों में 'ऑपरेशन डिजिटल बोर्ड' को समर्थन देगी ताकि स्मार्ट क्लास रूमों, डिजिटल बोर्डो तथा डीटीएच चैनलों के माध्यम से डिजिटल टेक्नोलॉजी के इस्तेमाल को बढ़ाया जा सके। शाला कोष, सगुन, शाला सारथी जैसी डिजिटल पहलों को मजबूत बनाया जाएगा।

मंत्री ने माईगॉव पर योजना के लिए 'लोगो डिजाइन' करने की प्रतियोगिता की घोषणा की। यह लोगो बच्चों के समग्र विकास के लिए समग्र दृष्टिकोण के महत्व को प्रदर्शित करेगा।

उपेन्द्र कुशवाहा ने अपने संबोधन में कहा कि शिक्षा के क्षेत्र में यह एक नई पहल है और समग्र शिक्षा स्कूल पूर्व स्तर से 12वीं कक्षा तक एकल शिक्षा स्कूल विकास कार्यक्रम के माध्यम से योजनाओं के एकीकरण का लाभ स्कूल को एक इकाई के रूप में देखने में मिलेगा। उन्होंने कहा कि सरकार का यह प्रयास है कि बच्चे सभी तरह के कौशल-अकादमिक, अतिरिक्त गतिविधि और व्यावसायिक-से लैस हों ताकि वह भारत के विकास के लिए आधारशिला रख सकें। एकीकृत योजना स्कूली शिक्षा की अवधारणा में महत्त्वपूर्ण बदलाव है और इसमें शिक्षक, टेक्नोलॉजी तथा विद्यार्थी के शिक्षा ग्रहण को एकीकृत किया गया है। उन्होंने यह भी कहा कि फोकस गुणवत्तापूर्ण शिक्षा में बेहतरी लाने के लिए शिक्षकों के प्रशिक्षण एवं प्रौद्योगिकी पर रहेगा।

इस अवसर पर प्रकाश जावड़ेकर ने 'समग्र शिक्षा योजना' की पुस्तिका और वेबसाइट का लोकार्पण किया। पुस्तिका में योजनाओं की विशेषताएं दी गई है और बताया गया है कि योजना किस तरह शिक्षा प्राप्ति परिणामों और टेक्नोलॉजी के इस्तेमाल को बढ़ाकर शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने पर बल देती है ताकि बच्चे और शिक्षक सशक्त बन सकें।

वेबसाइट में राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों, बच्चों, संस्थानों एवं व्यापक रूप से आम लोगों की सूचना के लिए योजना के बारे में विवरण दिया गया है। इसमें उन कदमों का विवरण दिया गया है, जिसके लिए योजना के तहत राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों को वित्तीय सहायता दी जा सकती है। राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के नवीनतम संदर्भ के लिए वेबसाइट पर सभी अधिसूचनाएँ, पत्राचार तथा सर्कुलरों को अपलोड किया गया है। इस परियोजना से एक ऑनलाइन परियोजना निगरानी प्रणाली जोड़ी गई है जो लक्ष्यों के संदर्भ में प्रगति को मापती है और एकीकृत योजना के विभिन्न कदमों के क्रियान्वयन प्रक्रिया की निगरानी करती है।

गतिविधि

दिल्ली अध्यापक परिषद का प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग

दिल्ली अध्यापक परिषद के कार्यकर्ताओं का दो दिवसीय प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग महाशय चुन्नीलाल सरस्वती बाल मंदिर, हरिनगर, दिल्ली में सम्पन्न हुआ। चारों निकाय के 130 कार्यकर्ता इस अभ्यास वर्ग में शामिल हुए । 11 मई की सायं से वर्ग प्रारम्भ हुआ। भोजनोपरांत सम्पन्न सत्र जिसकी अध्यक्षता जयभगवान गोयल ने की। यह सत्र परिचय तथा वृत्त निवेदन का रहा। इसमें अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेंद्र कपूर तथा उत्तर क्षेत्र प्रमुख जगदीश कौशिक का सान्निध्य रहा। 12 मई को प्रात: उद्घाटन सत्र में महेंद्र कपूर ने दीप प्रज्वलन कर सत्र का आरम्भ किया। सरस्वती वंदना के पश्चात् जयभगवान गोयल ने अभ्यास वर्ग के महत्त्व को रेखांकित करते हुए कहा कि अभ्यास वर्ग से कार्यकर्ता में निपुणता आती है, तथा सजीव संपर्क बढ़ता है।

मुख्य वक्ता महेंद्र कपूर ने कहा कि एक दीपक से दीपमालाएँ खड़ी करने का दायित्व शिक्षकों के कंधों पर है। हमारा ध्येय राष्ट्र हित में शिक्षा, शिक्षा हित में शिक्षक और शिक्षक हित में समाज को तैयार करना है। शिक्षक प्रश्न खड़े करने की अपेक्षा समाधान प्रस्तुत करें जैसे चाणक्य ने चन्द्रगुप्त रूपी समाधान मगध साम्राज्य को दिया। समाज की सोच के साथ जब हम खड़े होंगे, तो समाज भी हमारे साथ खड़ा होगा। शिक्षक के हाथ में बच्चों का भविष्य है, अच्छे चरित्रवान और नैतिकता संपन्न व्यक्ति का निर्माण शिक्षक ही कर सकता है।

एक सत्र में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के दिल्ली प्रान्त प्रचारक हरीश कुमार ने अपने संबोधन में कहा कि कार्यकर्ता को लोकेषणा और वित्तेषणा से दूर रहना चाहिए तभी एक नींव का पत्थर बन सकता है। विनोबा भावे को बचपन में माँ ने बताया था कि जो देता है वह देवता और जो रख लेता है वह राक्षस। इसका विनोबा जी के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा और भूदान यज्ञ में इस मंत्र का प्रयोग उन्होंने किया। संकल्प युक्त सामान्य सा दिखने वाला कार्यकर्ता अपने आचरण के कारण असामान्य बन सकता है।

मीडिया लेखन सत्र में मीडियाकर्मी सुशील ने कार्यकर्ताओं को मीडिया लेखन के गुर सिखाए और समाचार में उल्टे पिरामिड के महत्त्व को रेखांकित किया और कहा कि लेखन अभ्यास की चीज है। सत्र की अध्यक्षता कर रहे मीडिया प्रभारी अजय कुमार सिंह ने शिक्षकों से मीडिया लेखन में निपुणता लाने और शिक्षा से संबंधित विषयों पर निरंतर लेखन करते हुए मीडिया का ध्यान शिक्षा के महत्त्व की ओर खींचने का आह्वान किया।

'संगठन में महिलाओं की भागीदारी' विषय पर बोलते हुए वक्ता रोशन लाल ने कहा कि शिक्षा क्षेत्र में बहनों की भागीदारी 70 प्रतिशत के करीब है लेकिन संगठन में 10 प्रतिशत की भी भागीदारी नहीं है। कार्यकर्ता बहनों के घर जाकर परिवारजनों का विश्वास अर्जित करें, तभी बहनों की भागीदारी बढ़ सकती है। पंचम सत्र चक्रीय बैठक के रूप में सम्पन्न हुआ, जिसमें वर्ष भर के कार्यों की समीक्षा हुई और आगे की योजना पर चर्चा हुई। समापन सत्र में रोशन लाल ने कहा कि हमारे अंदर प्रामाणिकता, कथनी करनी में समानता, नि:स्वार्थ वृत्ति और संकल्प शक्ति का विकास होना चाहिए। अध्ययन वृत्ति तथा समसामयिकता का ज्ञान भी रखना आवश्यक है। इस अवसर पर उत्तर क्षेत्रीय प्रमुख जगदीश कौशिक, संगठन मंत्री राजेन्द्र गोयल, राजकीय निकाय अध्यक्ष वेद प्रकाश जाखड़, डॉ. सुदेश शर्मा और श्रीमती सरोज शर्मा ने भी अभ्यास वर्ग को संबोधित किया।

AJKLTF State Executive Committee was held at Jammu

The quarterly meeting of the State Executive Committee of All Jammu, Kashmir and Ladakh Teachers' Federation was held Trikuta Bhawan, Jammu under the aegis of Akhil Bharatiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh (ABRSM) which was chaired by Mahendra Kapoor, All India organising secretary of ABRSM.

The meeting was attended by all district presidents, secretaries and State body members of the Federation.

During the meeting all the teachers demanded streamlining and release of salary of all teachers and masters working under SSA/ RMSA schemes. It was said during the meeting that the teachers working under these two schemes have not been paid their salary for the last four months. More than sixty thousand teachers and masters working under these schemes are on the verge of starvation. They are facing many difficulties and hardships to run smoothly the expenditure of their families and have failed to shoulder the responsibilities of their children and old aged parents. They said that these teachers are under great mental depression due to non release of salary and it is adversely affecting the studies of students.

All the teachers alleged that they projected their demands before the SPD, SSA and RMSA, Director School Education Jammu, Secretary School Education, Minister for Education, but in spite of that no concrete mechanism was adopted by the department to resolve the genuine demand of more than sixty thousand teachers and masters working under SSA and RMSA schemes.

They demanded streamlining of salary of teachers and masters working under SSA and RMSA schemes so that these teachers work at their respective places with their soul and mind.

Rattan Chand Sharma, State general secretary welcome address and Dev Raj Thakur, State president proposed the vote of thanks.

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय)

प्रदेश महासमिति अधिवेशन जालौर में आयोजित

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) का दो दिवसीय प्रदेश महासमिति अधिवेशन ज्योतिबा फुले उमावि, जालौर में सांसद देवजी एम पटेल के मुख्य आतिथ्य में प्रारंभ हुआ। मुख्य वक्ता सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश ने मुख्य वक्ता के रूप में उद्घाटन सत्र को सम्बोधित करते हुए कहा कि भविष्य के निर्माण का दायित्व शिक्षक का है। माँ पहला, पिता दूसरा व सही मायने में सच्चा गुरु शिक्षक है। इस देश में गुरुकुल पद्धति से राम व कृष्ण जैसे शिष्य तैयार हुए जो वेद, मर्यादा, शस्त्र व शास्त्र का ज्ञान रखते थे। स्वामी जी ने जनवरी में नववर्ष मनाने का विरोध करते हुए इसे भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल बताया, उन्होंने शिक्षा जगत् में नई क्रांतिकारी परिवर्तन व्यवस्था को लागू करते हुए देश की 68 प्रतिशत युवा जनसंख्या को यम-नियम, आसन-प्राणायाम के अनुसार शिक्षा दिये जाने की वकालत की। श्रेष्ठ बालक के निर्माण का महत्त्व बताते हुए बालिका शिक्षा को विशेष प्रोत्साहन देने पर भी जोर दिया। स्वामी जी का मानना था कि माताओं पर समाज निर्माण की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी होती है।

उद्घाटन सत्र के मुख्य अतिथि देवजी एम पटेल ने कहा कि शिक्षा ही जीवन है और जीवन देने वाला शिक्षक है। उन्होंने पर्यावरण संरक्षण की महती आवश्यकता बताते हुए सभी को संरक्षण मे आगे आने का आह्वान किया। संगठन के महामंत्री देवलाल गोचर ने अपने प्रतिवेदन के माध्यम से वर्षभर में आयोजित संगठनात्मक गतिविधियों का विस्तार से वर्णन करते हुए, उपलब्धियों की जानकारी भी दी। उन्होंने आगामी योजनाओं के बारे में महासमिति अधिवेशन के संभागियों को बताया।

प्रदेश अध्यक्ष प्रहलाद शर्मा ने शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) को सर्वोपरि बताते हुए संगठन के दायित्ववान कार्यकर्ताओं को अपने संगठन को सदैव प्राथमिकता देते हुए प्रत्येक कार्यक्रम में सहभागिता का आह्वान किया। उन्होंने संघर्ष को प्रधान मानते हुए सदैव शिक्षा व शिक्षक हित में संघर्षरत रहने की आवश्यकता बतायी।

उद्घाटन सत्र से पूर्व शैक्षिक सत्र में हिन्दू जागरण मंच के जोधपुर, जयपुर प्रान्त संगठन मंत्री मुरलीधर ने अपने उद्बोधन में शिक्षक पर समाज को बेहतर करने की बड़ी जिम्मेदारी बताते हुए शिक्षकों को एकजुट होकर समाज पर विभिन्न प्रकार से होने वाले हमलों से बचाने के उपाय आने वाली पीढ़ी को बताने की आवश्यकता बताई। उनका कहना था कि भारतीय संस्कृति के जीवित रहने पर ही विश्व में शान्ति और सुरक्षा का वातावरण रहेगा। इस सत्र की अध्यक्षता करते हुए संगठन के संरक्षक राजनारायण शर्मा ने शिक्षकों का आह्वान करते हुए संगठन के ध्येय के अनुरूप अपना आचरण बनाते हुए सदैव शिक्षक हितों के संघर्ष में तत्पर रहने पर बल दिया।

प्रथम सत्र में संगठन के सभाध्यक्ष उमराव लाल वर्मा की अध्यक्षता में विधान संशोधन प्रस्ताव सत्र आयोजित हुआ, जिसमें संगठन की दृष्टि से विधान संशोधन प्रस्ताव पारित किये गये। सायंकालीन सत्र में विभिन्न विद्यालयों के छात्र-छात्राओं द्वारा शैलजा माथुर के निर्देशन में रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए।

संगठन के दूसरे दिन खुले सत्र में उपस्थित शिक्षकों ने विद्यालयों के समय में परिवर्तन करने, गैर शैक्षणिक कार्यों से शिक्षकों को मुक्त करने, शिक्षा विभाग के नीति निर्धारण में शिक्षकों की सहभागिता निर्धारित करने, प्रशिक्षण को गैर आवासीय रखे जाने, शिक्षाकर्मी, पैराटीचर, प्रबोधक आदि की विभिन्न समस्याओं तथा डी.पी.सी. की काउन्सलिंग में समस्त रिक्त पदों को प्रदर्शित करने, सामान्य व सामाजिक विज्ञान के विषय के अध्यापक को पदोन्नति के समान अवसर दिये जाने, सभी संवर्गों के लिये विद्यालय का समय एक ही निर्धारित करने, नई पेंशन योजना बन्द कर पुरानी पेंशन योजना बहाल करने तथा वेतन विसंगतियों को दूर कर केन्द्र के अनुरूप वेतनमान देने सम्बन्धित प्रस्ताव रखे गये। दूसरे दिन प्रदेश कार्यकारिणी का निर्वाचन सम्पन्न हुआ जिसमें अध्यक्ष प्रहलाद शर्मा सहित सम्पूर्ण प्रदेश कार्यकारिणी का निर्विरोध निर्वाचन सम्पन्न हुआ।

देशीय अध्यापक परिषद, केरल का प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग सम्पन्न

देशीय अध्यापक परिषद् (केरल) द्वारा आयोजित दो दिन के कार्यकर्ता शिविर का उद्घाटन करते हुए आखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अध्यक्ष प्रो. जे.पी. सिंघल ने कहा कि अध्यापक को केवल अपने विषय के लिए नहीं, बल्कि पूरे समाज के लिए काम करना चाहिए। शिक्षा भारत की प्राचीन संस्कृति के आधार पर होनी चाहिए। गुरुवायूर में चल रहे शिविर में देशीय अध्यापक परिषद के राज्याध्यक्ष सी. सदानन्दन मास्टर ने अध्यक्षता की और केसरी पत्रिका को संपादक श्री एन. आर. मधु ने मुख्य भाषण दिया। राज्य के कार्यदर्शी पी एस गोपकुमार ने स्वागत भाषण और गोविन्दन कुटिट मास्टर ने धन्यवाद ज्ञापित किया। उसके बाद के सत्र में सेवा नियमों के बारे में शिक्षा विभाग से सेवानिवृत्त सीनियर सू प्रण्ड श्री रवीन्द्र कुरुप्प ने जानकारी दी।

मलपुरम के जिला समिति द्वारा बनाये Education App का उद्घाटन और अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के केरल प्रदेश संगठन कार्यदर्शी मोहन कण्णन द्वारा रचित 'भारत संघर्ष चरित्रम्' का प्रकाशन भी इस शिविर में हुआ।

रुक्टा (राष्ट्रीय) के प्रतिनिधि मण्डल की उच्च शिक्षा मंत्री से टवार्ता

उच्च शिक्षा मंत्री श्रीमती किरण माहेश्वरी के साथ शिक्षक समस्याओं के संबंध में संगठन के प्रतिनिधिमंडल की भेंटवार्ता हुई।

लगभग डेढ़ घंटे तक चली इस भेंटवार्ता में पे बैंड-4 के लिए पात्र शिक्षकों पर यूजीसी नियम भूतलक्षी प्रभाव से लागू नहीं करने पर सहमति बनी। साथ ही संगठन द्वारा 30 जून 2018 तक पे बैंड-4 हेतु पात्र शिक्षकों के आवेदन पत्र मंगवाने का विषय भी प्रमुखता से उठाया गया, इस पर सकारात्मक कार्यवाही का मंतव्य मंत्री जी द्वारा प्रकट किया गया।

राजकीय महाविद्यालयों में प्राचार्यों की कमी से उत्पन्न समस्याओं को विस्तार से मंत्री जी के ध्यान में लाया गया। मंत्री जी ने इस संबंध में सचिवालय के अधिकारियों से वार्ता कर नवीन शैक्षणिक सत्र से पहले डीपीसी संपन्न करवाने हेतु आवश्यक दिशा निर्देश दिए।

प्रोफेसर पद हेतु चयन प्रक्रिया शीघ्र संपन्न करवाने की माँग पर मंत्री जी ने बताया कि वित्त विभाग ने कुछ जानकारियाँ माँगी थी उसे तैयार करवा लिया गया है तथा शीघ्र ही इस संबंध में चयन प्रक्रिया के दिशानिर्देश जारी किए जाएंगे। राजकीय ग्रामीण शिक्षा विभाग के शिक्षकों के लंबित कॅरियर एडवान्सड प्रक्रिया मुद्दे पर अभी तक कार्यवाही नहीं करने पर संगठन द्वारा रोष प्रकट किया गया। इस पर मंत्री जी ने आयुक्त महोदय से फोन पर बात कर अगले दिन उपस्थित होने के निर्देश दिए।

राजकीय महाविद्यालयों के रिक्त पदों पर शीघ्र नियुक्ति के बारे में मंत्री जी ने बताया कि इस हेतु सरकार कानूनी बाधाओं को हटवाने हेतु निरंतर प्रयासरत है तथा इस मध्य पे माइनस पेंशन के आधार पर सेवानिवृत्त शिक्षकों की नियुक्ति के लिये भी फाइल चला दी गई है।

सातवें वेतन आयोग को लागू करने के लिए सरकार संकल्पबद्ध है,यह बताते हुए मंत्री जी ने कहा की इस संबंध में वित्तीय भार की गणना करवाने के पश्चात फाइल को पुनः वित्त विभाग में भेजने के निर्देश दे दिए गए हैं। वह स्वयं मामले में रुचि लेकर इस विषय को देख रही हैं। शिक्षकों एवं शारीरिक शिक्षकों के पदनाम के संबंध में भी सकारात्मक रूप से फाइल चलाने हेतु आयुक्त महोदय को अगले दिन उपस्थित होने के निर्देश मंत्री जी ने दिए।

मंत्रालयिक कर्मचारियों एवं प्रयोगशाला सहायकों की कमी का मुद्दा मंत्री जी के समक्ष प्रस्तुत करने पर उन्होंने बताया कि संगठन की मांग के अनुसार प्रयोगशाला सहायकों की नियुक्ति नवीन शैक्षणिक सत्र से पहले करवाने के उनके पूरे प्रयास हैं तथा शेष पदों पर चयन होते ही उनको नियुक्त करवाने के प्रयास किए जाएंगे।

जनवरी से जून 2006 के मध्य वेतन वृद्धि वाले शिक्षकों को एक अतिरिक्त वेतन वृद्धि देने के संबंध में आयुक्त महोदय को अगले दिन समस्त तथ्यों के साथ उपस्थित होने के निर्देश दिए।

विश्वविद्यालयों में शिक्षकों एवं कर्मचारियों की कमी के संबंध में मंत्री जी ने बताया कि संगठन की मांग के अनुसार विश्वविद्यालयों में न्यूनतम 5 विभागों में शिक्षकों के पद एवं अन्य अशैक्षणिक पदों का सृजन कर दिया गया है तथा इस हेतु शीघ्र भर्ती प्रक्रिया पूर्ण करने के दिशा निर्देश भी जारी किए गए हैं ।

मंत्री जी ने सभी शिक्षक समस्याओं का जल्दी ही समाधान करने का आश्वासन दिया।

नरसिंहपुर में शाश्वत जीवन मूल्यों पर व्याख्यान

मध्य प्रदेश शिक्षक संघ नरसिंहपुर द्वारा आयोजित शपथ ग्रहण एवं व्याख्यान कार्यक्रम का आयोजन स्वामी विवेकानंद ऑडिटोरियम में किया गया जिसमें कार्यक्रम की अध्यक्ष शीला देवी ठाकुर अध्यक्ष जिला पंचायत शिक्षा समिति, मुख्य अतिथि अनुराधा पटेल जनपद पंचायत अध्यक्ष ,विशिष्ट अतिथि डॉक्टर अनंत दुबे प्रांतीय संयोजक नशामुक्ति प्रकोष्ठ महाकौशल प्रांत, प्रमेश शंकर शर्मा, अध्यक्ष भारत विकास परिषद, जयनारायण शर्मा, जनअभियान परिषद समन्वयक मंचस्थ रहे। शाश्वत जीवन मूल्य और संस्कारमूलक शिक्षा विषय पर आधारित व्याख्यान का शुभारंभ सरस्वती वंदना और स्वागत गीत से हुआ। व्याख्यान में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विभाग प्रचारक द्वारा प्रेरणास्पद और भारतीय परंपराओं, संस्कृति और प्राचीन शिक्षा पद्धति से रूबरू कराते हुए व्यावहारिक ज्ञान और भारतीय कला दर्शन और ऋषि मनीषी परंपरा द्वारा स्थापित विद्या अध्ययन की परंपरा को पुनर्जीवित कर पुनर्स्थापित करते हुए भारतीय शिक्षा पद्धति बनाने पर जोर दिया। शिक्षकों से विद्यालय में देश के नाम 5 मिनिट राष्ट्र प्रेरक प्रसंगों के लिए समय देने की बात कही। डॉक्टर अनंत दुबे ने वक्तव्य देते हुए भारतीय शिक्षा और दर्शन को विश्व में सर्वश्रेष्ठ बताया। विश्व गुरु बनाने हेतु भारत के शिक्षकों और अध्यापकों का आह्वान करते हुए स्वदेशी शिक्षा पद्धति और व्यावहारिक विधियों का भारत के युवाओं और विद्यार्थियों को ज्ञान देने की अनुकूल शिक्षा पद्धतियों पर जोर दिया जिससे भारत की युवा शक्ति का समाज निर्माण और राष्ट्रहित में एकता और अखंडता की स्थापना में बेहतर से बेहतर इस्तेमाल हो सके।

कार्यक्रम के अध्यक्षीय उद्बोधन में जिला पंचायत उपाध्यक्ष शीलादेवी ठाकुर ने मध्य प्रदेश शिक्षक संघ द्वारा रखे गए आयोजन की सराहना करते हुए शिक्षकों को शिक्षाविदों की तरह व्यवहार और आचरण करते रहने की बात कही। कार्यक्रम का मंच संचालन जिला सचिव सत्य प्रकाश त्यागी ने किया। व्याख्यान के उपरांत द्वितीय सत्र में मध्य प्रदेश शिक्षक संघ की जिला कार्यकारिणी के साथ सभी ब्लॉक तहसील और नगर कार्यकारिणी के पदाधिकारियों ने सामूहिक रूप से म.प्र. शिक्षक संघ के विधि और संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखकर विधि अनुसार मर्यादाएँ बनाकर ईश्वर की सहायता से पदेन दायित्वों को पूरा करने की शपथ ग्रहण की। कार्यक्रम में जिले भर से पधारे शिक्षकों अध्यापकों और शिक्षामित्रों का तिलक लगाकर अभिनंदन किया गया। स्वागत भाषण सह प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुए सचिव सत्यप्रकाश त्यागी ने 03 माह से कम के कार्यकाल में संघ को नई ऊर्जा देने वाली गतिविधियों के शिक्षक संघ द्वारा किये आयोजनों के बारे में बताया।

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ उ.प्र. का प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग लखनऊ में सम्पन्न

शिक्षक निर्माण के लिए जाना जाता है, उसका दायित्व प्रश्न करना नहीं प्रश्नों के समाधान देना है। भारत के शिक्षक ने सांस्कृतिक दूत के रूप में संसार को जीवन जीना सिखाया। शिक्षक का मतलब है पुनर्निर्माण। बालक को सम्यक दिशा की तरफ उन्मुख करने का कार्य शिक्षक का है।

उक्त बातें एसआर ग्रुप ऑफ इंस्टीट्यूट में राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ उत्तर प्रदेश के दो दिन की कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग व योजना बैठक के समापन समारोह में मुख्य अतिथि अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेंद्र कपूर ने कही। उन्होंने आगे बताया कि आज देश की 130 करोड़ आबादी में से एक करोड़ शिक्षक हैं अगर वह केवल संस्कार देने का कार्य करके, संस्कार पर चलने का कार्य करने लगें तो समाज व राष्ट्र की समस्याओं का समाधान हो जाएगा। हम विद्यालयों में केवल किताबी ज्ञान न देकर संस्कारों की नदी बहाने का कार्य करें तो कोरे कागज रूपी बच्चा एक नई इतिहास लिखने के लिए तैयार हो जाएगा। सरकारें आती-जाती रहती हैं पर शिक्षक स्थाई है। जीवन जीने की कला सिखाने का कार्य शिक्षक का है।

समापन समारोह में विचार विमर्श का सारांश प्रस्तुत करते हुए राष्ट्रीय सह संगठन मंत्री ओमपाल सिंह ने कहा कि किसी भी संगठन को संचालित करने के लिए कार्यकर्ता, कार्यालय, कार्यक्रम व कोष की जरूरत होती। इनमें कार्यकर्ता जीवंत व्यक्ति है जो संगठन को ताकत देता है। आज शिक्षा मंदिरों में कई विसंगतियाँ पैदा हो गई हैं, हमारी शिक्षा व्यवस्था पर, हमारे पुराने ज्ञान पर प्रश्न उठ खड़े हुए हैं। हमें समय का प्रबंधन, विचारों में सकारात्मक सोच, संतुलन, व्यवहार और सबको साथ चलने के मार्गदर्शक सिद्धांतों का अनुकरण करना होगा। सबको साथ लेकर चलना ही संगठन है। अकड़ से संगठन नहीं चलता, कार्यपद्धति और सबकी सहमति से ही कार्य आगे बढ़ता है।

महासंघ के प्रदेश अध्यक्ष प्रो. अनिल कुमार सिंह ने आगंतुकों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए कहा कि दो दिवसीय अभ्यास वर्ग में जो विमर्श हुआ है उसको कार्यात्मक रूप में बदलने का आप सबका दायित्व है। उन्होंने महासंघ के माध्यमिक संवर्ग की प्रदेश इकाई में संतोष कुमार सिंह को अध्यक्ष, दिनेश गुप्ता को महामंत्री, अनूप शर्मा को वरिष्ठ उपाध्यक्ष व शैलेंद्र द्विवेदी को संयुक्त महामंत्री के दायित्व मिलने की घोषणा की। कार्यक्रम का संचालन प्रदेश महामंत्री ऋषि देव त्रिपाठी ने किया।

एसआर ग्रुप ऑफ इंस्टीट्यूट के चेयरमैन डॉ. पवन सिंह चौहान ने अतिथियों व अभ्यास वर्ग में सम्मिलित समस्त शिक्षकों को स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया। अभ्यास वर्ग में संवर्गशः बैठकें हुई जिसमें प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च शिक्षा तथा तकनीकी शिक्षा की समस्याओं पर विचार विमर्श हुआ और उन्हें शासन स्तर तक पहुँचा कर निराकरण कराने का प्रयास किया जाएगा। महासंघ का विस्तार और संगठन को मजबूत करने के लिए आगामी वर्ष की कार्य योजना पर सुझाव भी दिए गए। इसमें अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के उच्च शिक्षा संवर्ग प्रभारी महेंद्र कुमार, अतिरिक्त महामंत्री डॉ. निर्मला यादव, डॉ. मुनेश अग्रवाल, डॉ. लवकुश मिश्रा, डॉ. हरनाम सिंह, दिनेश त्रिवेदी, डॉ. संदीप बालियान, डॉ. राजदेव तिवारी, सुनील मिश्रा, स्वदेश कुमार सिंह, रामपाल सिंह, कुलदीप मलिक, डॉ. अनीता त्यागी, संजय कनौजिया, डॉक्टर आलोक सिंह सहित प्रदेश के पदाधिकारी और कार्यकर्ता उपस्थित रहे।

मध्यप्रदेश शिक्षक संघ का प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग उज्जैन में सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ ने एक विचार यात्रा प्रारंभ की थी। उतार-चढ़ाव के बावजूद इन वर्षों में हम शिक्षा क्षेत्र में प्रश्न नहीं बल्कि समाधान लेकर आए। शिक्षकों की भूमिका को संघ ने राष्ट्रीय विचारधारा से जोड़ा है। हमारी सांस्कृतिक विरासत को ईस्ट इंडिया कंपनी एवं ब्रिटिश के 350 साल के शासन में हमने विस्मृत कर दिया। हमारी संस्कृति में मौसम के अनुकूल खान-पान होता है। यहाँ तक कि हमारे आहार में डाले जाने वाले मसाले भी औषधि युक्त हैं। डॉ. कस्तूरी रंगन कमेटी ने शिक्षा व्यवस्था, शिक्षकों के हाथों में सौंपने की बात कही। जैसे इसरो सीधे प्रधानमंत्री के नियंत्रण में काम करके सफलतापूर्वक उच्च परिणाम दे रहा है। उसी तरह हमें शिक्षा व्यवस्था की आधारभूत संरचना को बदलना होगा। महाकाल की नगरी उज्जैन में आयोजित दो दिवसीय मध्यप्रदेश शिक्षक संघ के कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के संगठन मंत्री महेंद्र कपूर ने उद्घाटन सत्र में व्यक्त किए। 10 सत्रों में आयोजित अभ्यास वर्ग में शिक्षक संघ की विकास यात्रा में वक्ताओं ने संगठन निर्माण में नरसिंहपुर की भूमिका का बार बार उल्लेख करते हुए नरसिंहपुर के सहज, सरल, सक्रिय संस्थापक सदस्य रहे स्वर्गीय राम नाथ तिवारी के योगदान को याद किया। अभ्यास वर्ग में प्रदेश के सभी संभागों के 44 जिलों के 158 प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

राष्ट्रीय मीडिया प्रभारी विजय सिंह, राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष संजय कुमार राऊत, क्षेत्र प्रमुख किशन लाल नाकड़ा, प्रान्ताध्यक्ष लछीराम इंगले, प्रांतीय महामंत्री क्षत्रवीरसिंह राठौर, महाकौशल के संगठन मंत्री लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, हीरालाल तिरोले, देवकृष्ण व्यास आदि ने संबोधित किया।

अभ्यास वर्ग के द्वितीय दिवस रात्रि में कवि सम्मेलन का आयोजन हुआ।

समापन सत्र में राष्ट्रीय महामंत्री शिवानंद सिंदनकेरा ने कहा कि कार्यकर्ता संगठन का आधार होता है। संगठन के पदाधिकारियों को कार्यकर्ताओं से सतत संपर्क रखते हुए प्रवास करते रहना चाहिए। राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेंद्र कपूर ने कहा कि हमारा वैचारिक संगठन हैं, हमारा विचार अंतिम व्यक्ति तक जाना चाहिए। प्रान्ताध्यक्ष लछीराम इंगले ने अपने उद्बोधन में पूरे प्रदेश के शिक्षकों को आश्वस्त किया कि संगठन द्वारा अब तक किए गए प्रयासों से शीघ्र ही सभी समस्याओं का निराकरण संभव होगा।

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ
राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक अहमदाबाद (गुजरात) में सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक 26 एवं 27 मई 2018 को सरदार बल्लभ भाई पटेल सहकार भवन, अहमदाबाद (गुजरात) में सम्पन्न हुई जिसमें 18 राज्यों के 86 प्रतिनिधि उपस्थित रहे।

राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक के उद्घाटन के पश्चात् गत कार्यकारिणी बैठक के कार्य विवरण को महामंत्री द्वारा प्रस्तुत किया गया जिसका सर्व सम्मति से कार्यकारिणी द्वारा अनुमोदन किया गया। महासंघ से सम्बद्ध विभिन्न राज्य संगठनों एवं विश्वविद्यालय संगठनों द्वारा अपना विशेष कार्यवृत्त प्रस्तुत किया गया जिसमें 7वें वेतन आयोग के क्रियान्वयन की स्थिति, नव वर्ष शुभेच्छा कार्यक्रमों, शिक्षक समस्याओं के समाधान के सम्बन्ध में किये गये आन्दोलन, कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग, संगोष्ठियाँ, महिला सम्मेलन, वार्षिक अधिवेशन, सामाजिक समरसता कार्यक्रम आदि की जानकारी प्रदान की गई। कार्यकारिणी के समक्ष 6 संगठनों - 1. देवी अहिल्या यूनिवर्सिटी शैक्षिक संघ, इन्दौर (म.प्र.), 2. बरकतुल्ला यूनिवर्सिटी शैक्षिक संघ, भोपाल (म.प्र.), 3. चौधरी रणवीर सिंह विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ, जींद (हरियाणा), 4. भक्त फूलसिंह महिला विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ, सोनीपत (हरियाणा), 5. कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी शैक्षिक संघ, कुरुक्षेत्र (हरियाणा), 6. जम्मू सेन्ट्रल यूनिवर्सिटी शैक्षिक संघ, जम्मू कश्मीर की सम्बद्धता के प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किये गये जिन्हें स्वीकार करते हुए इन संगठनों को महासंघ ने सम्बद्धता प्रदान की एवं उनका महासंघ में स्वागत किया गया।

24-25 फरवरी 2018 को दिल्ली में सम्पन्न अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की समीक्षा की गई। इस अनूठे कार्यक्रम की विषय वस्तु, सहभागिता, प्रमुख वक्ताओं, व्यवस्थाओं आदि की श्रेष्ठता स्वीकार करते हुए इस विषय पर और अधिक कार्य करने का निर्णय लिया गया। नव वर्ष के कार्यक्रमों की समीक्षा करते हुए इन्हें और अधिक विस्तार देने की आवश्यकता पर बल दिया गया। प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा की संवर्गश: बैठक आयोजित की गई जिसमें शिक्षा एवं शिक्षकों की समस्याओं के निराकरण के सुझाव दिये गये साथ ही सातवें वेतन आयोग की सिफारिशों को शिक्षकों के हित में सम्पूर्ण देश में एक समान लागू कराने पर भी विमर्श हुआ और आवश्यकक कदम उठाने के सुझाव आये।

5, 6 एवं 7 अक्टूबर 2018 को इन्दौर (मध्यप्रदेश) में आयोजित होने वाले सातवें राष्ट्रीय अधिवेशन की सम्पूर्ण कार्ययोजना को महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेन्द्र कपूर द्वारा सदस्यों के समक्ष रखा गया तथा उनसे सुझाव माँगे गये। अधिवेशन में शिक्षक समस्याओं पर चर्चा करने, प्रस्ताव पारित करने, खुला सत्र, संवर्गश: बैठक करने, तीन वैचारिक विमर्श आयोजित करने के साथ-साथ इसी अधिवेशन के दूसरे दिन चतुर्थ अ.भा. शिक्षक सम्मान कार्यक्रम आयोजित करने का निर्णय लिया गया। सम्बद्ध संगठनों के कार्यो की प्रदर्शनी, महासंघ के कार्यक्रमों की डाक्यूमेंट्री के साथ-साथ सम्बद्ध संगठनों की जानकारी से युक्त एक पुस्तिका का प्रकाशन करने पर भी सहमति बनी। महासंघ के आगामी कार्यक्रमों की श्रृंखला में उच्च शिक्षा संवर्ग की 10 जून, 2018 को दिल्ली में आयोज्य बैठक की जानकारी भी दी गई।

महासंघ के तीस वर्ष से अधिक की जीवन यात्रा में हम कहाँ से प्रारम्भ कर, कहाँ हैं एवं कहाँ पहुँचना चाहते हैं इस पर राष्ट्रीय संगठन मंत्री द्वारा चर्चा प्रारम्भ की गई जिस पर उपस्थित अधिकांश संगठनों ने अपने-अपने अनुभव बाँटते हुए अपने संगठन की भावी संकल्पना एवं कार्य विस्तार की रचना को स्पष्ट करते हुए यह स्वीकार किया कि अब महासंघ का अखिल भारतीय स्वरूप शासन, सरकार एवं शिक्षकों द्वारा स्वीकार किया जाने लगा है और शिक्षा के क्षेत्र में अब हमारी भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, अत: हमें पूर्ण निष्ठा एवं लगन से कार्य करते हुए प्रतिबद्ध कार्यकर्ताओं की सहायता से देश के सभी राज्यों में महासंघ की सशक्त उपस्थिति को साकार बनाना है।

शाश्वत जीवन मूल्य जनजागरण अभियान पर उच्च शिक्षा प्रभारी महेन्द्र कुमार द्वारा चर्चा प्रारम्भ की गई और सदस्यों से इसे और अधिक व्यापक बनाने के सुझाव माँगे। सदस्यों द्वारा अनेक सुझाव दिये गये और इस अभियान को सभी संगठनों द्वारा यशस्वी बनाने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहने की आवश्यकता को स्वीकारा और पूर्ण प्रतिबद्धता से कार्य करने का संकल्प लिया।

समारोप कार्यक्रम में महासंघ के अध्यक्ष जे.पी. सिंघल ने अपने उद्बोधन में कहा कि महासंघ राष्ट्र की सेवा करने के कार्य में संलग्न प्रतिबद्ध कार्यकर्ताओं का ऐसा संगठन है जो शिक्षा के क्षेत्र में सत्य का प्रतिपादन करने की क्षमता रखता है। इसके लिए हमें शिक्षकों में ऐसा सामर्थ्य निर्माण करना होगा जिसमें वह अच्छे नागरिक बनाने, मानवीयता फैलाने एवं विनम्रता विकसित करने का कार्य करें। आपने कहा कि इस सबके लिए शिक्षकों को हृदय की शुद्धता, मस्तिष्क की स्पष्टता एवं कर्म की निष्ठा के साथ कार्य करना होगा।

समापन सत्र में महासंघ की वेबसाईट www.abrsm.in का नये रूप में राष्ट्रीय अध्यक्ष द्वारा शुभारम्भ किया गया।

महासंघ के महामंत्री शिवानन्द सिन्दनकेरा ने आयोजकों को श्रेष्ठ व्यवस्थाओं के लिए आभार व्यक्त किया।